* श्रीराधामुकुन्दौ विजयतेतराम् *

-श्रीराधाकृष्ण-वृन्दावनतत्त्वनिरूपणपरा-
चोधिनी-राधातापिनी-राधोपनिषदां
चयरूपा-सानुवादा-सपरिशिष्टा-

उपनिषत्त्रयी

(पुरुषार्थ की उपल

पं० श्रीव्रजवल्लभशरण ब्रह्मचारी,
सांख्यतीर्थः, विद्याभूषणः
श्रीभगीरथ झा मैथिल, [illegible]

कः-पं० श्रीभगीरथ झा मैथिल,
न्याय वेदान्ताचार्य्यः

चौथमल गिदौड़िया अग्रवाल वैश्य,
मैनेजर—कोटे आफिस, राज्य जयपुर।

SHRI SHARDA PEETHA SANSKRIT VIDYAPEETH

विषयाः

	पृष्ठ		पृष्ठ
विनो	१	४—परिशिष्टम्	४६
न	३६	५—निष्कर्षः	६३
ना	४२		

वन, श्रीगुरुपुष्यामी सम्वत् १९९६ वि०
००० प्रति] — [श्रीराधा-कृष्ण-पद-प्रीतिः

प्रभुदयाल मीतल, अग्रवाल प्रेस, वृन्दावन।

समर्पणम्

यद्वृन्दावनमात्रगोचरमहो यन्न श्रुतीनां शिरो—
प्यारोढुं क्षमते न यच्छिव शुकादीनां च यद्ध्यानगम् ।
यत्प्रेमामृतमाधुरीरसमयं यन्नित्यकैशोरकम्—
यद्युग्मं परिवेष्टुमेव नयनं लोलायमानं मम ॥

—श्रीराधासुधानिधिः

श्यामां गोरोचनाभां स्फुरदसितपटप्राप्तिरम्याऽवगुण्ठां-
रम्यां वेणीचिकुरनिकराऽलम्बपादां किशोरीम् ।
तर्ज्जन्यंगुष्ठयुक्तां हरिमुखकुहरे युंजतीं नागवल्ली—
पर्णं कर्णयितार्द्धीं त्रिभुवनमधुरां राधिकां भावयामि ॥

—उ० आ० तं०

माधुर्य्यार्णां निधानं रसमयवपुषं पूर्णचन्द्रोपमास्यं—
रम्यं रम्यालकानां घनवृतनिटिलं पक्वविम्बाधरोष्ठम् ।
पाणौ वंशीं दधानं कनकरुचिपटप्राप्तिरम्यं किशोरं-
ध्याये राधामुखेन्दौ विनिहितनयनं ब्रह्मवेदान्तमृग्यम् ॥

यस्याऽसीमदयालवेन हि मया प्राप्ता मनोहारिणी-
रम्या रम्यगुणोदयस्य महिमव्युत्पादने मंजुला ।
तस्यैव प्रणयाम्बुधे रसतनोर्य्युग्मस्य पादाम्बुजे-
न्यस्तेयं वितनोतु मय्यपि तदीयत्वं श्रुतीनां त्रयी ॥

—भगीरथः 'दीनः'

कृष्णचन्द्र परिपूर्ण तम, तिन नख चन्द्र अनन्त ।
प्रभा प्रकाशित दिव्य अति, ताको ना कछु अन्त ॥
तिनकी अणु एक तत्व से, ब्रह्मा विष्णु महेश ।
रचे कोटि ब्रह्माण्ड हूँ, देव रवी शशि शेष ॥

—चौथमल गिर्दावल सेवक

आवश्यक वक्तव्य

मुक्तिकोपनिषत् के अनुसार वेद की ११८० एक हजार एक सौ अस्सी कुल शाखायें हैं, जिनमें २१ ऋग्वेद में, १०९ यजुर्वेद में, १००० सामवेद में, ५० अथर्ववेद में है। व्याकरण महाभाष्य के अनुसार भी किंचिन्न्यूनाधिक मात्रा से इसीके लगभग होते हैं। "एकैकस्यास्तु शाखाया एकैकोपनिषन्मता" इस मुक्तिकोपनिषत् के वाक्यानुसार उपनिषत् भी ११८० एक हजार एक सौ अस्सी होते हैं। उससे भी मन्त्रभाग ब्राह्मणभाग भेदेन* तथा पूर्वतापिनी उत्तरतापिन्यादि भेदेन एकहजार अस्सी से भी अधिक होते हैं। उनमें प्रायः ७–८ शाखा छोड़कर

---

* यथा एक ही माध्यंदिन शाखा में मंत्र भाग में ईशावास्य और ब्राह्मण भाग शतपथ में बृहदारण्यक है। इसी प्रकार काण्व शाखा में भी मंत्र ब्राह्मण भेदेन ईशावास्य और बृहदारण्यक हैं। यद्यपि काण्व-शाखीय माध्यन्दिन शाखीय ईशावास्य तथा बृहदारण्यक में विशेष भेद नहीं है। तथापि पाठ का अग्र पश्चात् अवश्य है। अष्टोत्तर शतोपनिषत् में मुद्रित ईशावास्य तथा बृहदारण्यक काण्वपाठानुसारी है। इसी प्रकार एक ही तैतरीयारण्यक में तैतरीय और महानारायण यह २ उपनिषद् हैं जिस पर सायण का भाष्य है।

शेष शाखाओं के मन्त्रब्राह्मण भाग प्रायः लुप्त ही होगये । ये शाखाएँ कब लुप्त हुईं, निश्चित पता नहीं । अनुमान किया जाता है कि बौद्ध काल से लेकर यवन काल तक में लुप्त हो गई हों। आजकल प्रायः वे ही शाखाएँ मिलती हैं,जिन-जिन शाखाओं के ब्राह्मणवर्ग विद्यमान हैं। उपनिषद्भाग में सबका प्रायः समान अधिकार होने से उपनिषदों की संख्या अपेक्षाकृत अधिक मात्रा में सुरक्षित रहनी संभव थी । परंच बौद्धकाल के बाद शुष्क ज्ञान मार्ग का प्रवाह इस तेजी के साथ चला कि अन्यान्य भक्तिमार्गीय साहित्य के साथ साथ शुद्ध भक्तिमार्गीय उपनिषत् भी बह गये । जो कुछ बचे, वे भी श्रीशङ्कराचार्य्य पाद के हस्तमुद्रांकित नहीं होने से संदिग्धप्रामाण्य हो गये । इस कारण भी विद्वानों से उपेक्षित होने से नष्ट हो गये, जैसे आज भी हो रहे हैं

इसलिये यह कहना कि उपनिषत् कुल एक सौ आठ ही हैं, यह मूर्ख प्रलाप मात्र है। जिस वरदतापिनी को महाराष्ट्र के ब्राह्मण वर्ग अत्यन्त आदर की दृष्टि से देखते हैं तथा गोपीचन्दनादि उपनिषदों के साथ टीका सहित पूना में मुद्रित भी है, वह भी अष्टोत्तर शतोपनिषत् से बाहर ही है। अस्तु,

अष्टोत्तर शतोपनिषत् के अन्दर केवल ईशादि दश तथा नृसिंहपूर्वतापिनी पर ही आदि शङ्कराचार्य्य का भाष्य है। श्वेताश्वर पर अन्य ही किसी शंकराचार्य्य का भाष्य है। उत्तरनृसिंहतापिनी

पर विद्यारण्य का भाष्य है। उसमें भी नृ० पू० तापिनी भाष्य का आदिशंकरकृतत्वेन उल्लेख होने से उसका आदिशङ्कर कृतत्व निश्चित है। इस से अतिरिक्त लघुजाबाल कौषीतकि नारायण महानारायण का शंकराचार्य्य ने उद्धरण मात्र कहीं-कहीं पर किया है। महोपनिषत् पर विद्यारण्य के गुरु शङ्करानन्द का भाष्य है जो एकादशोपनिषत् के साथ पूना में मुद्रित है। तथा इसके "एको ह वै नारायण आसीत् न ब्रह्मा नेशानः" इस अंश का उद्धरण भी वैष्णवावैष्णव सब सम्प्रदाय के ग्रन्थों में है। अन्य पर प्रायः शङ्कर का भाष्य तथा उद्धरण नहीं है।

गोपालतापिनी का भी उद्धरण यद्यपि आदि-शङ्कराचार्य्य के निबन्धों में प्रायः उपलब्ध नहीं हुआ है। तथापि अनेक स्मार्त विद्वानों ने उस पर टीकायें लिखी हैं। जिनमें नारायणीय टीका सहित अथर्ववेदीय एकादशोपनिषत् के साथ वह पूना में छपा है। स्मार्त अप्पण दीक्षित ने भी व्यासतात्पर्य निर्णय में उसको उद्धृत किया है। वैष्णवाचार्यों के यहाँ तो वह मुख्य ही है। जिस स्वाभाविक द्वैताद्वैत-सिद्धान्त का बृहदारण्यक के पाँचवें अध्याय में "पूर्णमदः" इस मन्त्र के व्याख्यान में तथा आरम्भणाधिकरण में श्रीशङ्कराचार्य्य ने खण्डन किया है। उस द्वैताद्वैत सिद्धान्त के आदि प्रवर्तक* श्रीनिम्बार्काचार्य्य तथा श्रीश्रीनिवासाचार्य्यकृत

* श्रीनिम्बार्काचार्य्य को श्रीशङ्कराचार्य्य से प्राचीन कहना यद्यपि आधुनिक अधिकांश लोगों का विश्वास के विपरीत है। तथापि मेरा

ब्रह्मसूत्र भाष्य वेदान्तकौस्तुभ तथा श्रीनिवासाचार्य्य के उपशिष्य श्रीपुरुषोत्तमाचार्य्य के वेदान्तरत्नमंजूषा में गोपालतापिनी का बाहुल्येन उद्धरण है। आर्ष ग्रन्थ गौतमीय तन्त्र में भी गोपाल मन्त्र के व्याख्यान के प्रसङ्ग में क्लीं कारादजस्रम्" इत्यादि, अंश उद्धृत है। श्रीदेवाचार्य्य के शिष्य श्रीसुन्दर भट्टजी का तो भाष्यभी श्रीगोपालतापिनी पर है। अस्तु,

पहले मैं बतला चुका हूँ कि अधिकांश उपनिषत् अनेक कारणों से काल के गले में चले गये और जा रहे हैं। उन उपनिषदों में से कुछ उपनिषदों को खोजकर अष्टोत्तरशतो पनिषदों के साथ लगभग २५० उपनिषदों का वाक्य कोष बना कर बम्बई के एक पण्डितजी प्रकाशित करा रहे हैं। जिसकी सूची का मैंने भी सुरत-मोटा-मन्दिर में निरीक्षण किया है।

विश्वास है कि पक्षपात छोड़कर प्रणिधान के साथ यदि दोनों सम्प्रदायों के ग्रन्थ तथा गुरुपरम्परा का अनुशीलन किया जाय तो निम्बार्काचार्य्य अवश्य ही शङ्कराचार्य्य से प्राचीन सिद्ध होंगे।" निम्बार्काचार्य्य तथा श्रीनिवासाचार्य्यरचित ब्रह्मसूत्र भाष्य में सपरिकर विचार होने पर भी कहीं भी शांकर मत की चर्चा तक भी नहीं। शङ्कर ग्रन्थों में तो द्वैताद्वैत मत पर विचार है ही, सो पहले बता चुका हूँ। कुछ लोग कहते हैं, कि माधवकृत सर्वदर्शन संग्रह में निम्बार्क मत का उद्धरण नहीं है। अतएव ये माधव से भी अर्वाचीन हैं। परञ्च माधव से निर्विवादसिद्ध प्राचीन भास्कर मत का भी सर्व० द० स० में उद्धरण न होने से यह हेतु अनैकान्तिक है। जिन मतों का वे सुज्ञ थे उनका वे संग्रह किए।

जिसमें राधोपनिषत् राधिकोपनिषत् गान्धर्वोपनिषद् नाम की तीन श्री राधा परक भी उपनिषद् है। इससे अतिरिक्त भी श्रीराधा परक उपनिषद् है। जिसका उद्धरण वैष्णवाचार्य्य के निबन्धो में मिलता है। यथा "राधया माधवो देवो माधवेन च राधिका विराजते जनेषु" इस श्रुति को ऋक् परिशिष्टस्थ कहकर उदुम्बरसंहिता तथा श्रीनिम्बार्काचार्य्य के शिष्योपशिष्य श्रीपुरुषोत्तमाचार्य्यकृतवेदान्तरत्नमंजूषा में ५ श्लोक में तथा रूपगोस्वामिकृत उज्वलनीलमणि आदि में उद्धरण किया गया है। "वामांगतहिता देवी राधा वृन्दावनेश्वरी" इसको भी निम्बाकाचार्य्य शिष्य उदुम्बराचार्य्य कृत उदुम्बर संहिता में ४ चतुर्थ व्रत प्रकरण में तथा बलदेव विद्याभूषण कृत सिद्धान्तरत्न की द्वितीयपाद की टीका में कृ. उप. उद्धरण है। एवम् "अनाद्योऽयं पुरुष एक एवास्ति स एव नायिकारूपं विधाय समाराधनतत्परोऽभूत् तस्मात्तां राधिकां रसिकानन्दां वेद विदो वदन्ति" इस का भी गोपालसहस्रनामभाष्य आदि बहुत निबन्धो में सामरहस्य श्रुति कहकर उद्धरण मिलता है परंच इन सबका मूल पुस्तक अभी तक नहीं मिला है। किसी महानुभाव को मिले तो प्रकाशित कराने की कृपा करें ताकि नष्ट होने से बच जाय।

यहाँ जो तीन उपनिषत् प्रकाशित किये गये हैं उनमें

पुरुषार्थबोधिनी का आचार्य,बलदेव,विद्याभूषण ने, अपना सिद्धान्तरत्न (गोबिन्द भाष्य, पठिक) के द्वितीय पाद मे, "+ गोकुलाख्ये माथुरमंडले वृन्दावनमध्ये" इत्यादि कइ अंश इसका उनिषद का आथर्वणपुरुषार्थबोधिनी, यह नाम निर्देश पूर्वक उद्धरण किया है। उनसे प्रायः-चार सौ वर्ष प्राचीन श्रीहरि व्यासदेवाचार्य्य कृतनिम्बार्क दस श्लोकी का व्याख्यान सिद्धान्तकुशुमाजंलि में पाँच में श्लोक का व्याख्यान में इस का नाम निर्देश पूर्वक उद्धारण है। परंच आज तक यह प्रायः अप्रकाशित था। मैंने प्राचीन हस्त लिखित पुस्तकों का अन्वेषण करते हुए, स्थानीय गिरिधारीजो के जोर्ण पुस्तकालय में इसे पाया। इसके अन्तिम पृष्ट में इसका लेखन काल १८८७ सम्वत् लिखा है। इस पुस्तका लम्बाइ एक वितस्ति चौड़ाई सात अंगुल प्रत्येक पृष्ट में सात पंक्ति है, कुल २६ पृष्ट हैं। इस को लाकर मैंने जब प्रकाशित करने का निश्चय किया कि भगवत्

+ सिद्धान्तरत्न की टीका में इस उपनिषद को अथर्ववेदीय पिप्पलाद शाखीयबताया गया है। ठीक है गोपाल तापिनी भी पिप्पलाद शाखीय है। इसी का योगपीठका विचार तो पु० बो० में भी है। जिस प्रकार एक ही तैतरीय अरण्यक ब्राह्मणमें तैतरीय और महानारायण दो उपनिषद् है उसी प्रकार पिप्पलाद शाखा में भी को उपनिषद हो सकता है।

कृपा से स्थानीय श्री जी महाराज की बड़ी कुञ्ज की पुरानी लाइ-
बेरी में एक राधातापिनी भी मिली यह भी अत्यन्त जीर्ण त्रुटित दो पत्रों में लिखित थी इसका लेखन काल उसमें नहीं है। परंच डेढ़सौ वर्ष प्राचीन प्रतीत होता है। इस का भी "देहो यथा छायया शोभमान" इस मंत्र का उद्धरण गोपालसहस्रनाम भाष्य में पं० दुर्गाप्रसाद जी ने किया है। पं० ज्वालाप्रसादजी ने भी अपने गोपालसहस्रनाम के हिन्दीभाष्य में किया है। तीसरी राधोपनिषत् सं० १९८६ में पं० दुलारेप्रसादजी ने प्रकाशित कराये थे। वही यहाँ पर भी लगा दिया गया है। इन सब उपनिषदों के प्रकाशन में द्रव्य द्वारा मुख्य सहायक, परम भागवत् चौथमल गिर्दावल जी के अनुरोध से संक्षिप्त भाषानुवाद भी लगा दिया है। अन्त में श्रीराधा तत्व मु के विषय में श्रीनिम्बार्काचार्य श्रीवल्लभाचार्य्य श्रीचैतन्यमहा-प्रभु श्री हरिवंशमहाप्रभु का दार्शनिक विचार समझने के लिये उन आचार्य्यों का संक्षिप्त सिद्धान्तसंग्रह भी कर दिया है। तथा पुराणों के भी कुछ वचन संग्रह कर दिये है। अन्त में उन सब का सारांश भी हिन्दी में लिख दिया है।

अब मैं गिरिधारी जी मन्दिर के महन्त बाबा श्रीरामचन्द्र दासजीतथा, श्रीजीमहाराज की बड़ीकुञ्ज के पण्डित व्रजवल्लभशरणजी विद्याभूषण सांख्यतीर्थ का मैं परम आ भारी हूँ कि ये महानुभावों ने अपने पुस्तकालय से इन पुस्तकों

को अन्वेषण करने के लिये तथा प्रकाशन करने का मुझे अधिकार प्रदानकिया। मैं अपने परम मित्र तथा परम भागवत चौथमल गिर्दावल जी को बार-बार धन्यवाद देता हूँ कि जो सर्व प्रथम १५ रु०देकर इस पुस्तक के प्रकाशन में उत्साह दिया। इस के बाद उन सब महानुभावों का आभारी हूँ जिन ने सहायता देकर प्रोत्साहित किया उन अग्रवाल प्रेस, के संचालक महानुवों का भी पूर्ण आभारी हूँ जिन की सहायता से, झटिति प्रकाशित हो सका।

अब पाठक महानुभावों से मेरी प्रार्थना है कि यद्यपि यथा साध्य संशोधन हमने किया है। तथापि दृष्टि दोष से कितनी ही अशुद्धियाँ रह गयीं हैं जिन को स्वय संशोधन करके पढ़ने की कृपा करें। इतिशम्।

—झोप.स्य पण्डितभागीरथशर्मा मैथिलः
मिथिलामहीमंडलांतर्गतढंगाहरिपुरग्रामनिवासी ।
सम्प्रति,, मोटा मन्दिर सुरत।

श्रीराधाजन्माष्टमी सं० १६६६
श्रीवृन्दावन ।
श्रीनिम्बार्काब्द ५०३४

॥ श्रीराधासर्वेश्वरो जयति ॥

॥ श्रीनिम्बार्कमहामुनीन्द्राय नमः ॥

अथ

अथर्वणो पुरुषार्थबोधन्युपनिषत्

❀ सप्तम प्रपाक ❀

अथ सुषुप्तौ रामः सुबोधमाधाय इव किमे+ देवि* ! कासौ कृष्णो योऽयंमद्भ्रातेति, तस्य का निष्ठा ब्रूहीति ।

सुषुप्ति काल में शेषरूपी श्रीराम ने सजग होकर शेषशय्या पर शयन की हुई महालक्ष्मी से प्रश्न किया । हे देवि ! भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र का मुख्य स्थान कौनसा है, जो कि मेरे भ्राता हैं ? और उनकी क्या निष्ठा (स्वरूप, गुण, शक्त्यादि) है ?

+ 'किम्' शब्द जिज्ञासापरक और 'ए' शब्द सम्बोधनात्मक प्रतीत होता है ।

* यद्यपि समाधानकर्त्री का स्फुट नाम निर्देश नहीं है, तथापि आगे "साप्युक्ता पद्मा०" इस सन्दर्भ से 'देवि' शब्द का महालक्ष्मी में ही तात्पर्य प्रतीत होता है, क्योंकि 'राम' शेष हैं और महालक्ष्मीजी शेषशय्या पर विराजी हुई हैं । अतः दोनों में प्रश्नोत्तर होना सङ्गत है ।

सानै वाच* राम ! सत्वं, भूः, भुवः, स्वः, महः, जनस्तपः, सत्यं, अतलं, वितलं, सुतलं, तलातलं, रसातलं, महातलं, पातालं एवं पञ्चाशत्कोटियोजनबहुलं स्वर्णाण्डं ब्रह्माण्डमिति अनन्तवैकुण्ठमिति अनन्तकोटिब्रह्माण्डानामुपरि कारुण्यजलोपरि महाविष्णोर्नित्यस्थलं वैकुण्ठम् ।

स पृच्छति कथं शून्यमण्डले निरालम्बे, साप्युक्ता पद्मा आसनासीनः कृष्णध्यानपरायणः शेषदेवोऽस्मि ।

इस प्रश्न को सुन कर श्रीमहालक्ष्मीजी ने निश्चित समाधान करना आरम्भ किया । हे राम ! भूः, भुवः, स्वः, महः, जनः, तपः, सत्य, अतल, वितल, सुतल, तलातल, रसातल, महातल, पाताल इन चौदह लोकों से सुसज्जित पचास कोटि योजन विस्तृत स्वर्णाभ ब्रह्माण्ड है—इस प्रकार के अनन्त ब्रह्माण्ड हैं और उनके अन्तर्गत विद्यमान वैकुण्ठ भी अनन्त हैं, वे गुणावतारों के स्थान हैं ।

अनन्त कोटि ब्रह्माण्डों के ऊपर उनका कारण जल है, जिसमें से ब्रह्माण्डों की उत्पत्ति होती है । उस कारण जल के ऊपर कारणोदशायी महाविष्णु का नित्यस्थल वैकुण्ठ है, वह केवल सत्वमय है । कारण जल पर वैकुण्ठ धाम है । यह सुन कर शेषजी ने पूछा कि जल के ऊपर निराधार वैकुण्ठ कैसे स्थिर रह सकता है ?

---

* 'उवाच' इस पद के उकार का छांदस लोप होगया है ।

तस्यानन्तरोमकूपेष्वनन्तकोटिब्रह्माण्डानि / अनन्तकोटि कारणजलानि तस्य सप्तकोटिसहस्रपरिमितानि प्रफणानि फणोपरि वैकुण्ठं विष्णुलोकमिति, रुद्रलोकं, शिववैकुण्ठं, दशकोटियोजनविस्तीर्णमिति । तदुपरि शतकोटियोजन विस्तीर्णं कृष्णस्थानं, गोलोकाख्यं, माथुरमण्डलं, महत्पदं

इस प्रकार पूछने पर महालक्ष्मीजी ने कहा कि, अपने पीरासन रूप से आनन्दकन्द श्रीकृष्णचन्द्र के ध्यान में निरत रहता हुआ मैं ही शेष हूँ अर्थात् भगवान् की स्वरूपभूत आह्लादिनी आदिक शक्तियों में से एक आधार-शक्ति के विलास-भूत शेष के अवलम्ब से ही वह वैकुण्ठ स्थित है।* कारण आधार-शक्ति रूप शेष के अनन्त रोम-कूपों में अनन्त कोटि ब्रह्माण्ड और अनन्त कोटि कारण जल स्थित हैं, उसके अनन्तानन्त फण हैं, उन फणों पर ही वैकुण्ठ अर्थात् महाविष्णु-लोक स्थित है। एवं रुद्रलोक अर्थात् दश योजन विस्तृत शिव वैकुण्ठ भी उन्हीं फणों पर स्थित है। उन सब वैकुण्ठों पर अपरिच्छिन्न भगवान् का गोलोकधाम× है, जो कि सर्वोच्च व्रजमण्डल अमृतमय

---

* अर्थात् आधार नाम की भगवान् की सच्चिन्मयी स्वरूपा-शक्ति मैं हूँ अतः मैं ही स्वांशभूत शेष रूप से उन लोकों का धारण करती हूँ।

× लोक दो प्रकार के हैं—एक 'प्राकृत' और दूसरे 'अप्राकृत', उनके परत्वापरत्व का क्रम यह है:—

प्राकृत-अनन्त कोटि ब्रह्माण्डों में, गुणावतार विष्णु के स्थान भूत अनन्त वैकुण्ठ और उनके बाहिर उमालोक, उस पर शिवलोक,

सुधामयसमुद्रेण वेष्टितमिति, तथाऽष्टदलपद्मकेशरमध्ये मणिपीठे सप्तावरणकमिति ।

सपृच्छति किंरूपं स्थानं ? किंरूपंपद्मम्? किं यन्त्रः ? किं सेवकाः ? किमा वरणम् ? इत्युक्ते साप्युक्ता गोकुलाख्ये माथुरमण्डले वृन्दावनमध्ये सहस्रदलपद्ममध्ये

समुद्र से संवेष्टित है। उसमें अष्टदल कमल की केसर पर एक अलौकिक चमत्कृतिपूर्ण मणि पीठ है, जिसमें सात आवरण हैं।

सर्वोपरि भगवान् श्रीकृष्ण का स्थान है, यह सुन कर राम पूछते हैं कि वह कैसा स्थान है और कैसा वह पद्म एवं यन्त्र है अथ च वहाँ कैसे सेवक हैं और वहाँ पर कैसे आवरण हैं। इस प्रकार प्रश्न को सुन महालक्ष्मीजी बोलीं--उस गोकुल नामक व्रज-मण्डल में श्रीवृन्दावन धाम है, जो कि प्रभु को परमप्रिय

उस पर शिव, ब्रह्मा, विष्णु आदि के अवतारी स्वरूप कारणोदशायी विष्णु का वैकुण्ठ है।

अप्राकृत-कारणोदशायी विष्णु के वैकुण्ठ के ऊपर महाशम्भु का स्थान है, उस पर महावैकुण्ठ, उस पर स्वतः प्रकाश-सर्वमूर्धयन्भूत गोलोकधाम है।।

इस विषय को विशेष रूप से देखना चाहें वे सज्जन बृहद्ब्रह्मसंहिता, ब्रह्मसंहिता ब्रह्मवैवर्त पुराण, अनन्तसंहिता आदि ग्रन्थों को देखें। अथवातो ४७ पृष्ठ तक अर्चिरादिपद्धति देखें एवं अन्यान्य वैष्णवाचार्यों के ग्रन्थों को देखें।

कल्पतरोर्मूलेऽष्टदलकेशरे गोविन्दोऽपि श्यामः पीताम्बरधरो द्विभुजो मयूरपिच्छशिरो वेणुवेत्रहस्तो निर्गुणः सगुणो निराकारः साकारो निरीहःस चेष्टते विराजते इति। द्वे पार्श्वे चन्द्रावली राधिका* चेति यस्या अंशे

है। उसमें भी हजार पत्र वाले कमल पर कल्पवृक्ष के मूल में अष्टदल यन्त्र है, जहाँ पर कि दीनदयालु श्रीगोविन्द विराजते हैं, जिनका घनश्याम वर्ण है, पीताम्बर पहिने हुए हैं, मोरमुकुट मस्तक पर है, सुन्दर दोनों भुजाओं में लकुट और वंशी लिये हैं, जिनको वेदशास्त्रों में ऋषियों ने "निर्गुण, सगुण, निराकार, साकार, निरीह, चेष्टावान्" आदि अनेक रूपों से सम्पन्न कहाहै।

उन गोविन्दाभिध श्रीकृष्ण के पार्श्व में दो देवी विराजती हैं। चन्द्रावली और राधिका उन में राधिका सर्व श्रेष्ठा अतः एव श्रीकृष्ण की यह महिषी हैं, अन्यान्य गोपिकायें उनका ही कायव्यूह रूप हैं यहाँ तक कि लक्ष्मी दुर्गा विजयादि श्रीराधा के ही अंशांश हैं। अतः अन्यान्य गोपिकाओं

---

* यद्यपि चन्द्रावली के अपेक्षया राधा का ही पूर्वोपादान होना चाहिये, क्योंकि आगे चलकर श्रीराधा को ही 'तस्याऽद्या प्रकृती राधा" इत्यादि प्रकरण से सर्वश्रेष्ठ बताया गया है। तथापि यहाँ पर राधा शब्द का पूर्वो पादान करने से "यस्यांशंशे" इस अग्रिम यत् शब्द से राधा का परामर्श नहीं होकर चन्द्रावली का परामर्श हो जाता। अतएव राधा पद का यत् पद के सान्निध्य के लिये पश्चादुपादान किया गया है।

लक्ष्मी दुर्गा विजयादिशक्तिरिति, सम्मुखे ललिता, वायव्येश्यामला, उत्तरे श्रीमती, ऐशान्यां हरिप्रिया, पूर्वे विशाला, आग्नेय्यां श्रद्धा, याम्यांपद्मा, नैर्ऋते भद्रा षोडशदलाग्रे चन्द्रावली, तद्वामेचित्ररेखा, तत्पार्श्वे कृष्ण प्रिया, तत्पार्श्वे कृष्णवल्लभा, तत्पार्श्वे चन्द्रावती तत्पार्श्वे मनोहरा।

तत्पार्श्वे योगानन्दा, तत्पार्श्वे परानन्दा, तत्पार्श्वे सत्यानन्दा, तत्पार्श्वे प्रेमानन्दा, तत्पार्श्वे किशोरिवल्लभा

की योग पीठ में स्थिति का क्रम बताते हैं। श्रीकृष्ण के संमुख ललिता वायव्य में श्यामला उत्तर में श्रीमती ईशान में हरिप्रिया पूर्व में विशाला अग्नि कोण में श्रद्धा दक्षिण में पद्मा नैर्ऋत में श्रद्धा विराजती हैं, ये ही अष्ट सखियां गौतमी तंत्रादि में क्रमशः ललिता विशाखा चंपकलता चित्रा तुंगविद्या इन्दुलेखा रंगदेवी सुदेवी इत्यादि शब्दों से अभिहित हैं ऐसा प्रतीत होता है ग्रन्थ भेद से नाम भेद हो सकता है। एक के अनेक भी नाम हो सकते हैं। कर्णिका के आठों दल में रहने वाली आठों सखियों का परिचय देकर अष्ट दल के बाह्य षोडश दल में रहने वाली सखियों का परिचय देते हैं—

सोलहवें दल के अग्र भाग में चन्द्रावती उनके वाम क्रमेण: क्रमशः पार्श्व में चित्ररेखा चित्रकरा मदनमंजरी शशिरेखा कृष्णप्रिया कृष्णवल्लभा चन्द्रावती मनोहरा योगा-

करुणा कुशलाद्याः एवं विविधागोप्यः सेवां कुर्व्वन्ति । इत्याथर्व्वणे परमरहस्ये पुरुषबोधिन्याः सप्तमः प्रपाठकः ॥७

ओं साप्युक्ता तस्यबाह्ये शतदलपत्रेषु योगपीठेषु रासक्रीडानुरक्तागोप्यस्तिष्ठन्ति । एतद्बाह्ये स्वर्णप्राचीरं चतुर्द्वारपालाश्चतिस्रोगोप्यः तिष्ठन्ति । ततः पारिजातं समुह्य ततोदलपानिव ततः प्रथमावरणे पश्चिमे सम्मुखे स्वर्णमंडपे गोपकन्या द्वितीये श्रीदामादिः ।

नन्दा, परानन्दा, सत्यानन्दा, प्रेमानन्दा, किशोरीवल्लभा करुणा, कुशला, प्रभृति राधा कृष्ण की सेवा करती हैं ।

इत्याथर्वणे पुरुषार्थ बोधिन्युपनिषदः
सप्तमप्रपाठकभाषानुवादः ॥७॥

फिर शेष से जिज्ञासित होने से पद्मादेवी बोलती हैं—शतदल के बाह्य में योग पीठ के अन्दर ही रासक्रीड़ानुरक्ता गोपी विराजती हैं, इसके चारों तरफ बाह्य स्वर्ण प्राचीर अर्थात् दिव्य स्वर्ण मय भवन विशेष हैं । जिसमें चार द्वारपाल रहते हैं उसके बाद उस कल्प वृक्ष के चारों तरफ तत्तदल पालक के जैसे आगे कथ्यमान सब विराजते हैं, यथा शतदल के बाहिर वर्णन में पश्चिम दिशा में श्री कृष्ण के सम्मुख में स्वर्ण मण्डप में गोपकन्या द्वितीय आवर्ण में श्री दामादि तृतीय आवरण में स्तोक कृष्णादि चतुर्थ आवरण में यमुना तट में सुरभ्यादि पंचम

तृतीये स्तोककृष्णादिः चतुर्थावरणे यमुनातटे सुरभ्यादिः पंचमावरणे पारिजातमूले रुक्मिण्यादिवेष्टितो वासुदेवोऽपि षष्ठावरणेऽनन्तोऽपि यमलार्जुनवृक्षश्च सप्तमावरणे शुक्लोविष्णुर्द्वारपालश्च स्वरहस्य संज्ञासा सहस्र* अवताराणि भवन्ति एतद्वाहे ब्रह्मकुण्डं ततः स्नात्वा शक्तुं समर्थो भवति। उत्तरपृष्ठे प्रथमे स्वर्णमंडपे देव कन्या द्वितीये सुदामादिः तृतीये सुभद्रादि चतुर्थेश्यामलादि पंचमे हरिचन्दनमूले रेवती सहितोबलभद्रोऽपि षष्ठेसिद्धगन्धर्व्वगणोऽपि सप्तमे रक्तवर्णो द्वारपालो विष्णु-

---

आवरण में पारिजात के मूल में रुक्मिण्यादि सहित वासुदेव, षष्ठ आवरण में यमलार्जुन वृक्ष सप्तम आवरण में द्वार पाल रूप से गौर वर्ण विष्णु हैं।

अपने-अपने रहस्य भाव के अनुकूल मत्स्यादि तत्तन्नाम युक्त हजारों अवतार स्थान हैं। उसके बाहिर ब्रह्मकुण्ड है, यहाँ पर स्नान करने से रहस्य लीला देखने योग्य होता है। उत्तर पृष्ठ में प्रथम आवरण के स्वर्ण प्राचीर में देव कन्या, द्वितीय आवरण में सुदामादि, तृतीय में सुभद्रादि, चतुर्थ में श्यामलादि, पन्चम में हरिचन्दन मूल में रेवती सहित बलभद्र, षष्ठम में सिद्धगन्धर्व, सप्तम में रक्त वर्ण विष्णु द्वार पाल हैं।

---

* संज्ञया सहस्राणि इति पाठः प्रतिभाति।

रिति एतद्बाह्ये श्यामकुण्डम् इति तत्र स्नात्वा प्रेममक्ति-रिति। पूर्वे प्रथमावरणे योगपृष्ठेस्वर्णमण्डपे मुनिकन्या, द्वितीये वसुदामादिः, तृतीये भद्रादिः, चतुर्थे सुबलादिः, पंचमे सन्तानवृक्षमूले रत्यादिसंहितः प्रद्युम्नोऽपि, सप्तमे गौरवर्णो द्वारपालो विष्णुरिति।

एतद्बाह्ये राधाकुण्डम् अत्रस्नात्वा गोप्यङ्गि भूत्वा कृष्णपूजार्होभवति। तद्दक्षिणे प्रथमावरणे श्रुतिकन्या, द्वितीये किंकिण्यादिः, तृतीये लवङ्गादिः, चतुर्थे कामधेनो-र्वृन्दम्, पञ्चमे कल्पतरोर्म्मूले उषयासंहितोऽनिरुद्धइति, षष्ठे सनकादिमुनयः, सप्तमे कृष्णवर्णोद्वारपालोविष्णुरिति, एतद्बाह्यरुद्रकुण्डम् अत्र स्नात्वाविष्णुरूपीभवति।

उसके बाहिर श्यामकुण्ड है, यहाँ पर स्नान कर प्रेम-भक्ति-लाभ करता है, पूर्व भाग प्रथमावरण में योगपीठ में स्वर्णमंडप में मुनिकन्या, द्वितीय में वसुदामादि, तृतीय में भद्रादि, चतुर्थ में सुबलादि, पञ्चम में सन्तानवृक्ष मूल में रत्यादि सहित प्रद्युम्न, सप्तम आवरण में गौरवर्ण द्वारपाल विष्णु विराजते हैं।

इसके बाहर राधाकुण्ड है, यहाँ स्नान करने से गोपी रूप होकर कृष्ण-पूजा योग्य होता है। उसके दक्षिण प्रथमावरण में श्रुतिकन्या, द्वितीय में किंकिण्यादि, तृतीय में लवङ्गादि, चतुर्थ में कामधेनु का वृन्द, पञ्चम में कल्पतरु, मूल में उषा सहित अनिरुद्ध, षष्ठ में सनकादि मुनि, सप्तम में कृष्णवर्ण द्वारपाल

यमुनायां स्नात्वादर्शनार्होभवति । राधाकृष्णयोरेकमासनपद्म, एकाबुद्धिः, एकंमनः,एकंज्ञानम्, एकआत्मा, एकपदमेकाकृतिः, एकंब्रह्मतयासनम् हेममुरलिवाद्यं हैमं पद्ममिति मानसपूजायां जपेन, ध्यानेन, कीर्तनेन, स्तुतिमानसेन सर्वेणनित्यस्थलं प्राप्नोतिनान्येन ।

इत्यथर्व्वणे पुरुषबोधन्यामष्टमः प्रपाठकः ।

ओ स पृच्छति कियन्ति वनानि केषुदलेषु कानिक्रीडास्थानानि इत्युक्ते साप्युक्ता भद्रश्रीलोहभाण्डीरमहाताल

विष्णु । इसके बाहर रुद्रकुण्ड, उसमें स्नान करने से विष्णु रूपी होता है । यमुना में स्नान करने से राधाकृष्ण के दर्शन योग्य होता है । अब राधाकृष्ण को सर्वथा अभेद बताते हैं अर्थात् राधाकृष्ण को एक ही आसनपद्म, एक ही बुद्धि, एक ही मन, एक ही ज्ञान, एक ही आत्मा, एक ही स्थान, एक ही प्रयत्न, एक ही ब्रह्ममय उपवेसन, एक ही हेम मुरलीवाद्य, एक ही हेममय क्रीडापद्म, इस प्रकार मानस-पूजा में जप से, ध्यान से, कीर्तन से, स्तुति से, मानस-चिन्तन से नित्य विहार-स्थल प्राप्त करता है और दोनों में भेद-बुद्धि रखने से नहीं ।

अष्टमः प्रपाठकः समाप्तः ।

पुनः शेषजी पूछते हैं—कितने वन हैं, किस दल में कौन क्रीडास्थान हैं ? इस जिज्ञासा के बाद उत्तर देती है-- भद्रवन,

खदरिका बहुलाकाम्यकुमुदमधुवृन्दावनानि च, द्वादशवनानि, कालिन्द्या+ पश्चिमे सप्त, पूर्वे पञ्चवनानि तत्र उत्तमं गुह्यमस्त्विति। महावनं,गोकुलादि, खदिर,खण्डीर, नन्दवनानि,नन्दीश्वरनन्दवनानि, नन्दखण्डवनम् पलाशाऽशोकके तकीसुगन्धमोदनं च । केलिवनं, भोजनवनं, सुखप्रशाधनवनं, वत्साहरणवनं, शेषशायिवनं, श्यामवनं, पूज्यवनं, दधिवनं, ग्रामवनं, वृषभानुवनं, संकेतवनं, नीपवनं, रासवनं, क्रीडावनं, धूसरवनं, कोकिलवनं, सत्ववनम्,बिल्ववनम्,कुमुदवनम्,उत्सुकवनं, चन्दनवनानि

श्रीवन, लोहवन, भाण्डीरवन, महावन, तालवन, खादिरवन, बहुलवना, काम्यवन, कुमुदवन, मधुवन, वृन्दावन, ए द्वादश वन हैं, उसमें वृन्दावन सबसे उत्तम और गुह्य वन है। महावन गोकुल का नाम है और खादिरवन, खण्डीरवन, नन्दवन, नन्दीश्वरवन, नन्दवन, नन्दखण्डवन, पालाशवन, अशोकवन, केतकीवन, सुगन्धमोदनवन, केलिवन, अमृतवन, भोजनवन, सुखप्रशाधनवन, वत्साहरणवन, शेषशायिवन, श्यामवन, पूज्यवन, दधिवन, ग्रामवन, वृषभानुवन, संकेतवन, नीपवन, रासवन, क्रीडावन, धूसरवन, कोकिलवन, सत्ववन, वेलवन, कुमुदवन, उत्सुकवन, चन्दनवन, ये सब चौआलीस उपवन हैं।

+ सात वन यमुना के पश्चिम में और पाँच वन पूर्व में हैं। पद्मपुराण वृन्दावन-माहात्म्य में स्पष्ट है।

एतेन चतुरोत्तरचतुर्थानिवनानि, नानालीलामयानि नित्यस्थलानि । चतुर्विंशत्यधिकशतदलवाह्ये विष्णोर्योगपीठमिति, एतद्बाह्ये + वैदूर्य्यप्राचीरंचतुर्द्वारं लक्षसूर्य्यसमुज्ज्वलम् कल्पद्रमाकीर्णं एतद्बाह्येसप्तावरणमिति वृन्दावनम् । यमुनावेष्टितम्, ब्रह्मादिसेवितम्, योगीन्द्रादिध्यानतत्परम्, कोकिलध्वनिमनोहरम्, कपोतसारैःसुन्दरम्, मयूरनित्याढयम्, कुसुमवेणुरञ्जितम्, मन्दादिपवनसेवितम्, वसन्तऋतुसेवितम्, यत्र सुखं नास्ति दुःखं नास्ति, जरा नास्ति मरणंनास्ति, क्रोधाक्रोधंनास्ति । यत्र पूर्णानन्दमयं किशोरवयसः, नित्यमष्टकोणनिर्मितं योगपीठं

ये नाना लीलामय तथा नित्यस्थल हैं । पूर्वोक्त एक सौ चौबीस दलयुक्त कमल के बाहर विष्णु का योगपीठ है । इसके बाहर वैदूर्य्य मणिमय प्राचीर है, उसके बाहर सात आवरण हैं । ये सब मिल कर सप्तावरण पर्य्यन्त वृन्दावन है । जो कि यमुना से वेष्टित, ब्रह्मादि सेवित, योगीन्द्रों से ध्यानयुक्त, कोकिलादि ध्वनि मनोहर कपोतादि से सुन्दर, मयूरादि नृत्ययुक्त, कुसुम वेणु आदि से रञ्जित, मन्दादि वायु से सेवित, सदा वसन्त ऋतु से सेवित है । यहाँ पर प्राकृत सुख, दुःख, जरा-मरण, क्रोध-अक्रोध नहीं है अर्थात् प्राकृत कोई भी विकार नहीं है । यहाँ पर नित्य किशोर श्रीकृष्ण का पूर्णानन्दमय अष्टकोण × योगपीठ है । +

+ इसका स्पष्ट निरूपण वृन्दावन-माहात्म्य पद्मपुराण में है ।

× अष्टकोण षट्कोण के बीच में समझना चाहिये ।

तत्र माणिक्यसिंहासनेस्थितः गोपीजनवल्लभो दिव्य-व्रजवयोरूपो व्रजेन्द्रो व्रजबालैकवल्लभोऽनादि-रादिः श्रुतिमुखो द्विभुजो दलितांजनश्यामदेहो नीलकुन्तलशिखण्डदलमण्डितः तीर्य्यक्कृतगुञ्जावतंश शशांकमाणिक्यकिरीटशिरो गोरोचनतिलकः कर्णयोर्म-करकुण्डले नाशाग्रे मुक्ताफलं सिन्दूरारुणधरः तीर्य्य-ग्ग्रीवः श्रीवत्सकौस्तुभधरो मुक्ताहारविभूषितः वन्यस्रग्वी मालतीदामभूषितः, चन्दनभूषितशरीरः करे कंकण-केयूरः कट्यांकिंकिणीपीताम्बरधरःगम्भीरनाभि कमलहृत-जानु युगलः पद्मवज्रादिचिन्हितपादतलः तदंशाशेन कोटिमहाविष्णुरिति ।

योगपीठ में माणिक्य सिंहासन है, जिसमें गोपीजनवल्लभ दिव्य-व्रज वयोरूप व्रजेन्द्र व्रजबालक तथा बालिकाओं का वल्लभ आदि से रहित सबके आदि श्रुतियाँ जिनका मुख है, द्विभुज दलिताञ्जन श्याम देह नील कुन्तल शिखण्ड चूड़ गुञ्जा भूषण चन्द्रिकायुक्तमाणिक्यकिरीटी गौरोचनतिलक कर्ण में मकर कुण्डल नाशाग्र में मुक्ताफल सिन्दूरारुणयुक्त तीर्य्यक्त् ग्रीव श्रीवत्सकौस्तुभयुक्त मुक्ताहार विभूषितवनमाला धारी मालतीमाला भूषित हाथ में कंकड़ादि युक्त कटि में किंकणी पीताम्बर गंभीरनाभि कमल पद्म वज्रादि भूषित पाद तल गोविन्द विराजते हैं ।

एवं रूपं कृष्णचन्द्रं चिन्तयेन्नित्यशः सुधीरिति। तस्यआद्या प्रकृतीराधिका नित्या निर्गुणासर्व्वालङ्कारशोभिता प्रसन्नाऽशेषलावण्यसुन्दरी अस्मदादीनांजन्मदात्री यस्या अंशावहवो ब्रह्मविष्णुरुद्रादयो भवन्ति एवं भूतस्य सिद्धिमहिम्ना सुखसिन्धुरशेनोत्पन्नः। इति अथर्वणि पुरुषबोधिन्यां नवमः प्रपाठकः।

जिनके अशांश से कोटि कोटि महा विष्णु उत्पन्न होते हैं। एतादृशदिव्यरूप युक्त श्रीकृष्ण का नित्यशः सुधीजन को चिन्ता करना चाहिये। उस भगवान् श्रीकृष्ण की आदि प्रकृति अर्थात् श्री भूलीलादित था ललिता चन्द्रावल्यादि सब प्रेयसीयों का आदि भूता अंशिनी श्रीराधिका ही है। यथा यहीं पर पहले कहा जा चुका है—

यस्या* अशे लक्ष्मी दुर्गा विजयादि शक्तिः, राधातापिनी में भी कहा है एतस्या+ एक कायव्यूहरूपा गोप्यो महिष्यः श्रीश्चेति, पद्म पुराण वृन्दावन माहात्म्य में कहा है—

तत्प्रिया$ प्रकृतिस्त्वाद्या राधिका परदेवता।
तत्कला कोटि को त्यंशा दुर्गाद्या त्रिगुणात्मि का॥

---

*—जिनके अशसे लक्ष्मी दुर्गा विजयादि शक्ति उत्पन्न होते हैं।

+—श्रीराधा के ही कायव्यूहरूप चन्द्रावल्यादि गोपी रुक्मिण्यादि महिषी और वैकुण्ठेश्वरी लक्ष्मी हैं।

$—श्रीकृष्ण के आदि परम प्रिय पत्नी राधा है जिनके कला का कोटि कोटयंश से त्रिगुणात्मिका दुर्गादि होते हैं।

स्कन्द पुराण भागवत महात्म्य में कहा है--

*आत्मारामस्य कृष्णस्य ध्रुवमात्मास्तिराधिका ॥
तस्या एताश विस्तारा: सर्वा: श्रीकृष्ण नायिका ।

इन सब विशेषणों से राधा और कृष्ण का सर्वथा-साम्य प्रतिपालन किया गया है ।

उदम्बरसंहिता वेदान्तरत्नमंजूषा सिद्धान्तरत्नाद्धृत— ऋक् परिशिष्ट में भी कहा है । राधया माधवो देवो माधभे न च राधिका विभ्राजते जनेषु योऽनयोर्भेदं पश्यति समुक्तः स्यान्न संसृतेः, इति अर्थात् राधा संहित ही कृष्ण और कृष्ण सहित ही

---

*—आत्माराम कृष्ण के आत्मा राधा है । उसी राधा के अंशविस्तार भूता श्रीकृष्ण के सब प्रेयसी वर्ग हैं ।

इन सब विशेषणों में राधा और कृष्ण का सर्वथा साम्य प्रतिपादन किया गया है ।

श्रीराधा को श्रीकृष्ण का आदि प्रकृतित्व कथन से श्रीकृष्ण और श्रीराधा को स्वरूपवत् अनादि सिद्ध दाम्पत्य भी सूचित किया गया है । ऋक् परिशिष्ट श्रुति में भी नित्य साहित्य विधान द्वारा नित्य दाम्पत्य सूचित किया गया है । इसी अभिप्राय से नन्दनन्दन पत्नी, यशोदानन्द पत्नी इत्यादि नाम परिगणित किया गया है—

यथा—तस्य पत्नी समाख्याता राधेति जगदम्बिका ।
कलावती सुता राधा साक्षात् गोलोकवासिनी ॥
गुप्तस्नेहनिबद्धासा कृष्णपत्नी भविष्यति ॥
स्वयं राधा कृष्णपत्नी इत्यादि पुराण वाक्य है ।

ॐ पुरुषोत्तम यस्यां निशायां+श्रीपुरुषोत्तमाभिधायिनी पुरीयं साक्षात्ब्रह्म यत्र परम संन्यासस्वरूपःकृष्णन्यग्रोधःकल्पपादपःयत्र लक्ष्मी जाम्बवन्ती राधिका कमला चन्द्रावती सरस्वती ललिता विमलादिरिति साक्षात् ब्रह्म स्वरूपो जगन्नाथः अहं सुभद्रा शेषांगस्तु ज्योतीरूप

राधा भक्तों के हृदय में विराजती हैं। इन दोनों मे यो भेद बुद्धि रखते हैं वह संसार से मुक्त नहीं होते हैं और श्रीकृष्ण के जैसे श्रीराधा भी अनादि सिद्धा हैं नित्या हैं। निखिलप्राकृतगुण रहिता तथा अप्राकृत अनन्त कल्याण गुण युक्ता और सर्वालङ्कार शोभिता और नित्य प्रशस्ता तथा श्रीकृष्णवत् निरतिशय सौन्दर्यादि अनन्त गुण युक्ता है। इनके अंश से अनन्त ब्रह्म विष्णु महेशादि उत्पन्न होते हैं और यह हम लोगों का भी जन्म दात्री है। इनके सिद्धि महिमा से सुख का समुद्र उत्पन्न होता है। इति नवम प्रपाठकः।

यह पुरुषोत्तमपुरी साक्षात् ब्रह्म स्वरूप ही है जहाँ पर परम सन्यास (समस्त लोकोपकारी) रूप वंशीवट कल्पतरु है और लक्ष्मी, जाम्बवन्ती, राधिका, कमला, चन्द्रावती, सरस्वती, ललिता, विमला आदि सखियां हैं, एवं साक्षात् ब्रह्म स्वरूप जगन्नाथ और सुभद्रा अथच श्रीकृष्ण के अङ्ग ज्योतिः स्वरूप भक्तराज श्रीसुदर्शन विराजमान हैं। इस प्रकार से एक ही ब्रह्म-

---

+ यहां पर पाठ खण्डित होने के कारण मूल का मूल ही रख दिया गया है।

सुदर्शनो भक्तश्च एवं ब्रह्मपञ्चधा विभूतिर्यत्र मथुरा गोकुल द्वारिका वैकुण्ठपुरी श्वेतद्वीपपुरी रामपुरी शिवपुरी यमपुरी पुरुषोत्तमपुरी नारसिंहपुरी नरनारायणपुरी कुबेरपुरी गणेशपुरी शक्रपुरी एता देवतास्तिष्ठन्ति ।

यत्र सुरसा पातालगंगा श्वेतगंगा रोहिणीकुण्ड ममृतकुण्डमित्यादि नानापुरी यत्रान्नंब्रह्म परमपवित्रं शान्तोरसः केवला मुक्तिः सिद्धिः भूर्भुवः स्वर्महस्तत्वं, यत्र भार्गवी यमुना समुद्रममृतमयं वासो वृन्दावनानि-नील पर्वतं गोवर्द्धनसिंहासनं योगपीठप्रसादं मणि

पुरी, तरु पट्टग्रहिषी, अवतार और विभूतियां इन भेदों से पञ्च प्रकार से व्याप्त हो रहा है ।

विभूतियां ये हैं—मथुरा, गोकुल, द्वारिका, वैकुण्ठपुरी, श्वेतद्वीपपुरी, रामपुरी, शिवपुरी, यमपुरी, पुरुषोत्तमपुरी, नरसिंह पुरी, नर नारायणपुरी, कुबेरपुरी, गणेशपुरी इन्द्रपुरी और उनमें रहने वाले देवगण ।

वहाँ श्रीगोलोक धाम में, गङ्गा, पाताल गङ्गा, श्वेत गङ्गा ये महानदियां हैं । रोहिणी कुण्ड, अमृत कुण्ड आदि कुण्ड हैं, अनेकों ही पुरियाँ हैं और ब्रह्म ही परम पवित्र अन्न है, शान्त रस और केवल मुक्ति ही सिद्धि है । भूः भुवः स्वः ये ही महातत्व हैं । जहाँ पर श्रीभार्गवी यमुनाजी हैं । समुद्र अमृत मय वास नील पर्वत गोवर्धन सिंहासन, योगपीठ

मण्डपं विमलादि षोडश चन्द्रिका गोपी यत्र समुद्रतीरे चन्तं कामधेनुवृन्दं यत्र सिंहासनं (यो) देवता आवरणानि ।

तत्र न जरा न मृत्युर्नकालो न भंगो न जपो न विवादो न हिंसा न भ्रान्तिर्ननिद्रा न स्वप्न एवं लीला काम भरा स्वविनोदार्थं भक्ता: सोत्कण्ठिताश्चास्यां लीलायां क्रीडन्ति।

काऽपि गोपस्त्रीरूपलक्ष्मी सा का च राधिका समा च कोऽप्यक्रूर: स उद्धव: सनकोऽपि ब्रह्मा शिवश्च

महल, मणियों का मण्डप विमला आदि सोलह चन्द्रिका (श्रेष्ठ स्वरूप गोपियां और समुद्र तटपर चरते हुये कामधेनु गऊओं के यूथ को और सिंहासन में देवताओं के आवरणों को भक्त जन देखते हैं ।

वहां पर बुढ़ापा और मृत्यु नहीं हैं, क्योंकि यहाँ काल की गति नहीं चलती । किसी प्रकार का क्षय एवं हार जीत तथा कलह हिंसा और भ्रम निद्रा, स्वप्न ये नहीं हैं, किन्तु स्वेच्छानुकूला शुद्धलीला है, अपने २ विनोद के लिये भक्त जन उत्कण्ठा पूर्वक उस शुद्ध लीला में रमण करते हैं ।

उस शुद्ध लीला के अनुभव करने वालों का निर्देश करते हैं ।

कोई गोप स्त्री रूप लक्ष्मी जो कि अंशत्वेन श्रीराधिकाजी के समत्व शील हैं । अक्रूर, उद्धव, सनक, ब्रह्मा, शिव और

योगाश्च कानिच कर्ताव भोक्ताच केऽपि देवाः, (कस्य) देवा इव वेदाश्च गायन्ति केचाऽन्ये कूर्मादयः अंशसमुद्राणिचाश्यंस्तज्ज्योतिः पुरुषः स्वभावा एकेऽपि ऋषयः पितरो भ्रातरो बान्धवा सदारादय इत्यादि लीला रसिका भक्ता विहरन्ति ।

अत्रायं श्लोकः—

एको देवो नित्यलीलानुरक्तो भक्तव्यापी भक्तहृद्यान्तरात्मा ।
कर्माध्यक्षो भक्तभावानुरक्तो लीलासाक्षी भक्तजीवोव्रजेन्द्रः ॥
इत्यार्थवणे पुरुषसुबोधिन्यां दशमः प्रपाठक ॥ १०॥

मूर्तिमान् योग, एवं तज्जन्य सुख और कर्ता भोक्ता एवं केचिदेव और देवों की भाँति गान करने वाले वेद तथा च कूर्मादिक अवतार दाराओं के सहित परम ऋषि पितृ भातृ बन्धु आदिक लीला रसिक भक्तजन विहार करते हैं । भगवान इन सबकी आत्माओंके साक्षी हैं ।

उपरोक्त विषय में मन्त्र भाग का भी यह श्लोक है । जहाँ जहाँ भक्त हैं तहाँ तहाँ सतत निवास करने वाले भक्त जनों के हृदय में विराजमान उनकी अन्तरात्मा नित्यलीला में अनुरक्त कर्मों की व्यवस्था करने वाले, भक्तों के भावों (प्रेम धारणाओं) में अनुरक्त और उनकी लीला का साक्षी एवं सर्वस्व एक ही व्रजेन्द्र देव है ।

अथ यंत्रं प्रवक्ष्यामि यतः स्थलं नित्यमुच्यते ।
क्षणार्धं कृष्णचन्द्रस्तु यत्स्थानं न परित्यजेत् ॥

प्रेमरूपा यथा राधा तादृक् कृष्णश्च कौतुकी ।
स्वशक्त्या विहरेत्तत्र तत्स्थानं न परित्यजेत् ॥

दिव्यं वृन्दावनं स्थानं शेषांगस्थं च सर्वदा ।
ब्रह्मरूपमिदं स्थानं सच्चिदानन्दरूपकम् ॥

अष्टकोणं लिखेदादौ दशार्णंतत्र वैलिखेत् ।
तन्मध्ये कामराजं तु ध्यात्वा कृष्णंलिखेद्बुधः॥

अब मैं यन्त्र का विचार करती हूँ, यन्त्र क्या है पूजन सेवनादि के लिये भगवान् के नित्यस्थल का नकशे के जैसे नकल है । प्रथमतः नित्यस्थल का अनुकरण रूप यन्त्र पूजनादि के लिये लिखने की प्रक्रिया बतायेंगे उसके सामान्य स्वरूप बताते हैं । अर्थात् भगवान् का नित्यस्थल वृन्दाबन अलौकिक अर्थात् अप्राकृत है निज स्वरूप भूत आधार शक्ति रूप शेष देव के शिरस्थ हैं ब्रह्मरूप है अतएव सच्चिदानन्द घन है, प्राकृत पदार्थों का उसमें संपर्क मात्र भी नहीं है । अतएव निर्विकार और नित्य हैं उस स्थान को श्रीकृष्ण आधे क्षण के लिये भी त्याग नहीं करते हैं । अपितु प्रेमरूपा श्रीराधा के साथ परम कौतुकी श्रीकृष्ण नित्य विहार करते हैं । यंत्र लिखना अब बताते हैं—यंत्र लिखते समय प्रथमतः अष्टकोण लिखे उसके बीच में दशार्ण लिखे, दशार्ण के बीच में कामबीज लिखे वहाँ पर नव

नवभिः शक्तिभिः सार्धं सह कृष्णं तु राधया ।
सम्पूज्य योगपीठेच मध्ये वेदीं स्मरेत्ततः ॥

षट्कोणं च लिखेद्बाह्ये षड्बीजं तत्र वै न्यसेत् ।
वृन्दावत्यादि षड् भक्त्या पूजयेत् साधकोत्तमः ॥

वृन्दावती रंगदेवी सुभद्रा च प्रियम्बदा ।
रत्नलेखा च नित्या च शक्तयः परिकीर्तिताः ॥

इमाः षट्शक्तयः कृष्णे निगूढ़प्रेमदायिकाः ।
आसां मंत्रं बीजषट्कं नमोऽन्तं प्रणवादिकम् ॥

गोपनीयं प्रयत्नेन कृष्णप्रेमबहिर्म्मुखात् ।
तद्बाह्ये प्रथमावृत्तौ रेखामष्टौ तद्बिलाञ्छितम् ॥

शक्तियों के साथ राधाकृष्ण की पूजा करके योगपीठ के मध्य में वेदी का स्मरण करे ।

तब अष्टकोण के बाहर षटकोण लिखे छै कोणों में छै बीज लिखे । उन स्थानों में वृन्दावती रंगदेवी सुभद्रा, प्रियम्बदा रत्नलेखा, नित्या ये आठ शक्तियों का पूजा करे । ये छै शक्तियाँ श्रीकृष्ण में निगूढ़ प्रेम देने वाली हैं । इन छयों का छयो बीज और नमः सहित प्रणवादिक मन्त्र को श्रीकृष्णप्रेम से बहिर्मुख जनों से गुप्त रखना चाहिये । उस षटकोण से बाहर प्रथमवृत्तमें आठ रेखा लिखना चाहिये । उन रेखाओं के बीज ललितादि शक्तियों की पूजा करनी चाहिये । उसके अनन्तर

ललिताद्यास्तेषु पूज्या तासांमध्ये पुरातथा ।
द्वात्रिंशद्ऊर्ध्वरेखासु षोडशान्तं विभावयेत् ॥
सिद्धाषोडशसाहस्रं गोपीनां तेषु पूजयेत् ।
चतुरस्रं चतुर्द्वारं लिखेत् पीठचतुष्टयम् ॥
दक्षिणे श्रुतिसिद्धानां सचरोविंशत्सहस्रम् ।*
प्रतिसव्यां मुनिसिद्धानामष्टाशीतिसहस्रकम् ॥
पूजयेत्, पुरचारीणांतु षट्त्रिंशपूर्व्वकंलक्षम् ।
मंडलंहिचतुर्ल्लक्षं साहस्रं पूजयेत्ततः ॥
आसां मंत्रंहि आगमसम्बादि विज्ञायतेच ।

बत्तीस रेखाओं के बीच सोलह सहस्र सिद्धा गोपियों का पूजन करना चाहिये । उसके अनन्तर चतुरस्र चतुर्द्वार चार पीठ लिखे । उसमें दक्षिण दिशा में बीस हजार श्रुति सिद्धाओं का, उसके बाँये भाग में अट्ठासी हजार मुनि सिद्धाओं का उसके बाँये भाग में चार लाख पुरचारियों का पूजन करे, इन सबों का मंत्रादि वेद के मन्त्र भाग में है ।

चार वेद हैं, उन चार वेदों में मुख्य गायत्री है, अतः गायत्री का भी पूजन करना चाहिये । एवं चारों दिशाओं में चार प्रकार से अधिष्ठात्री देवताओं की पूजा करे । उसमें सायुध

---

* सचतुर्विंशतिसहस्रमिति भट्टि पाठः ।

चत्वारो वेदागीयन्ते वेदानामतोगायत्रीतत्रतत्रपूज्याभवति ।
चतुर्दिक्षु चतुर्धा च अधिष्ठात्री देवता ।
त्रिपुरादिचतुः शक्तिः सायुधसपरिवारा सगणा पूज्यते ।
क्रीडास्थलमिदंज्ञेयं द्वितीयावृतमेवतु ।
तद्बाह्ये चतुर्दिक्षुसरस्योह्यत्रनिर्म्मलाः ॥
चतसोऽमृतपानीया हंशपद्मादिसंकुलाः ।
पूर्वे सिद्धिप्रदानाम्ना रत्नसोपानसंयुता ॥
तज्जलस्पर्शमात्रेण ज्ञानचक्षुर्भवेन्नृणाम् ।
प्रेमभक्त्यातुपश्यन्ति न पश्यन्तीतरेजनाः ।
पतत्रीविशालस्तत्र कृष्णप्रेम सुविह्वलाः ॥

सपरिवार सगण त्रिपुरादि चतुः शक्ति का पूजन करे । यह द्वितीयावृत क्रीडास्थल है । इसके बाहर चारों दिशा में चार अमृत रूपी जल से युक्त सरोवर हैं । जो सततहंशकारंडवादि पक्षी से युक्त रहता है । पूर्व दिशा में रत्न सोपान से युक्त सिद्धि प्रदानाम का सरसी हैं । जिसका जल स्पर्श मात्र से लोगों को ज्ञान चक्षु होता है । प्रेम भक्ति से ही वह सरस देखा जाता है । अन्यथा नहीं उस सरोवर में श्रीकृष्ण प्रेम से विह्वल बहुत से पक्षी रहते हैं । जो माया गुण से मुक्त हैं प्रेम भक्ति से युक्त हैं वे ही महात्मा लोग उस सरोवर को देखते हैं ।

ये च माया गुणातीताः प्रेमभक्तिसमन्विताः ।
तज्जलं ते तु पश्यन्ति महात्मानो महोदरम् ॥
पश्चिमद्वारसंकीर्णा नाम्ना पुष्पारिणी परा ।
नानामणिसमाकीर्णा, सोपानैरुपशोभिता ॥
तज्जलस्पर्शमात्रेण साधका दिव्यरूपिणः ।
भवन्ति तत्क्षणादेव श्रीकृष्णप्रेमभाजनाः ॥
उत्तरद्वारितत्रस्थो नाम्ना मलयनीविडः ।
मणिवैदूर्य्यसोपानः पुष्परत्नसमाकुलः ।
वसन्तोत्सवयात्रां तु कुरुते तत्रकेशवः ।
ततो मंडलबाह्ये च रेखायां केशवस्य च ॥
सखायः षोडशतेष्वेव सगणान्पूजयेत् सुधीः ।

पश्चिम द्वार के समीप में पुष्पारिणी नाम की सरसी है जो नाना मणि गणों से समाकीर्ण अनेक विध सोपान से युक्त है। उसके जल स्पर्श मात्र से साधक वर्ग दिव्य रूपी होकर श्रीकृष्ण का प्रेम पात्र बन जाता है। उत्तर द्वार में मणिदुर्ग सोपान से युक्त पुष्परत्न से युक्त मलय निविड़ नाम का सरोवर है। वहाँ पर भगवान् बसन्तोत्सव यात्रा करते हैं। मण्डल के बाह्य रेखाओं में भगवान् का सोलह सखाओं का निवास है। अतः उन सखाओं का अपने अपने गण के साथ वहीं पर पूजा करे।

रेखाया वाह्यभागे तु सन्ति कल्पमहीरुहाः ।
तेषां मध्यस्थवेदिकायां सुरभीवृन्दमर्चयेत् ॥

कालिन्दीम्पूजयेत्तत्र वृन्दवादनभूषणाम् ।
स्फुरद्रत्नोभयतटीं श्यामलामृतवाहिनीम् ॥
एतत्पीठं पुण्डरीकं पंचावरणसंयुतम् ।
तत्रैव सुरभीवृन्दं तत्प्रधानाष्टकं शृणु ॥
सुरभी, वृन्दा, निसिद्धा, चित्रांगी, कामधेन्वपि ।
कृष्णा कृष्णमुखी पीता पूर्वादिक्रमसंस्थिताः॥

तद्बाह्येष्टदलं वृक्षव्रजं ओं प्रणवंपुटम् ।
तेषु चाक्षरान् मंत्रान् विलिख्य तत्र पूजयेत् ॥
पूर्वपत्रं कामकूटम् तत्र केशिनिपातितम् ।

रेखा के बाह्य भाग में कल्प वृक्षों का समूह है, उसके मध्य में गौओं का वृन्द का अर्चन करे। उसके मध्यवेदिका में वृन्दवादनभूषणा रत्नमय उभयतटयुक्ता श्यामलामृत वाहिनी यमुनाजी का पूजन करे। वहाँ पर पंचावरण युक्त पीठ है। उस पीठ में सुरभी वृन्द का पूजन करे। उन सुरभियों में आठ प्रधान है। जिनके-सुरभी, वृन्दा, निसिद्धा, चित्रांगी, कामधेनु, कृष्णा, कृष्णमुखी, पीता ये नाम हैं। इनको पूर्वादि दिगक्रमेण पूजा करना चाहिये। उसके बाहिर अष्टदल है और वृक्षों का समूह है, वहाँ पर प्रणवपुट है उन पत्रों में अक्षर मन्त्रों को लिखकर वहाँ पर पूजन करे। उसमें पूर्व पत्र कामकूट हैं,

महारासपरे तत्र कृष्णगोपीकदम्बकैः ॥
श्रीपुरं वह्निदिग्यस्ति तत्र कृष्णं प्रपूजयेत् ।
वासो हरन्तं गोपीनां नीपशाखायताश्रयम् ॥
पीठमानन्दकान्यंच निरोधोत्तरदिग्दलम् ।
यत्र वेणुं वादयन्तौ रामकृष्णौ रसान्वितौ ॥
अन्वितौ युवतीवृन्दैर्गोगोपैर्गीतमोहितैः ।
ऐशान्यां यद्दलं प्रोक्तं रतिसारं तदुच्यते ॥
यज्ञपत्नीभिरुल्लासैर्नानोपायनपाणिभिः ।
अन्वितौ रामकृष्णौ तौ ध्येयौ विश्वेश्वरेश्वरौ॥
पश्चिमे यद्दलं प्रोक्तं महापीठं विदुर्बुधाः ।

यो महारास का स्थान है। वहाँ पर केशी मारा गया है। अग्नि-कोण में श्रीपुर हैं, वहाँ पर गोपियों का वस्त्र हरण करते हुए श्रीकृष्ण का पूजन करे।

उत्तर दिशा में आनन्दक नामक पीठ है। वहाँ पर रसान्वित वेणुवादन तत्पर युवतीवृन्द तथा गोप से युक्त रामकृष्ण का पूजा करें। ईशान दिशा में रतिसार नाम का दल है। यहाँ पर नानोपायन से युक्त परम प्रेम से यज्ञ पत्नियों से युक्त रामकृष्ण का ध्यान करे। पश्चिमे जो दल है उसको महापीठ कहते हैं।

यत्राभिषिक्तो भगवान् शक्रेणेशः स्वयं भुवान् ।+
वायुकोणदले पीठं वर्धनं विश्वमंगलम् ॥
यत्र गोवर्धनं शैलं धृतवान् भगवान् प्रभुः ।
दक्षिणे यद्दलं प्रोक्तं जयतं नाम पीठकम् ॥
तत्रैव भावयेन् मंत्रं सख्युः षोडश मंडलान् ।
सखिनां बाह्यभागे तु द्वात्रिंशद्दलमुच्यते ॥
जन्मादिलीलया तत्र देवदेवो..... ।
नानाक्रीडारसं तत्र कृष्णं च परिचिन्तयेत् ॥
तद्बाह्ये स्वर्णप्राचीराकारे कोटिसूर्य्यसमुज्वले ।
चतुर्दिक्षु महोद्याने मंदमारुतसेविते ॥
पश्चिमे सम्मुखे श्रीमत्पारिजातद्रुमाश्रये ।
तत्राधस्तु स्वर्णपीठे स्वर्णमंडपमण्डिते ॥

यहाँ पर ईश्वेश्वर भगवान् को इन्द्र ने अभिषेक किया, वायुकोण के दल में वर्धन नाम का विश्वमङ्गलपीठ है, यहाँ पर गोवर्धनशैल को भगवान ने धारण किया। दक्षिण दल में जयत नाम का पीठ है, वहाँ भगवान् के सखाओं का मंत्र सहित भावना करै।

सखाओं के बाहिर भाग में बत्तीस दल हैं, वहाँ पर भगवान् जन्मादि लीला करते। वहाँ पर नाना क्रीडारस युक्त

× स्वयं भगवान् इति पाठः प्रतिभाति ।

तन्मध्ये मणिमाण्डिक्य रत्नसिंहासनोज्वले ।
तत्रोपरि परानन्दं वासुदेवं जगद्गुरुम् ॥
त्रिगुणातीतचिद्रूपं सर्वकारणकारणम् ।
चतुर्भुजं महद्धाम ज्योतीरूपं सनातनम् ॥
शंखचक्रगदापद्मधारिणं वनमालिनम् ।=
रुक्मिणी सत्यभामा च नाग्निजितो सुलक्षणा ॥
मित्रविन्दा सुनन्दाच तथा जाम्बवन्ती प्रिया ।
सुशीला चाष्टमहिषी वासुदेवावृतास्तथा ॥
उद्धवाद्याः पारिषदाऽवृतास्तद्भक्तितत्पराः ।

भगवान का चिन्तन करे। उसके बाहर स्वर्ण मन्दिर में कोटि सूर्य प्रकाश युक्त में जिसके चारों तरफ महा उद्यान है। वहां स्वर्ण पीठ पर स्वर्ण मण्डप में रत्न सिंहासन परमानन्द स्वरूप जगद्गुरु त्रिगुणातीत चिद्रूप सर्वकारण कारण वासुदेव व्यूह का भावना करे। उसका प्रकार बताते हैं।

चतुर्भुज महत् स्वरूप ज्योतिः स्वरूप सनातनरूप, शङ्ख, चक्र, गदा, पद्मधारी बनमाली स्वरूप का ध्यान करे, उनके रुक्मिणी, सत्यभामा, नाग्निजीती, सुलक्षणा, मित्रविन्दा, सुनन्दा जाम्बवन्ती, सुशीला ये आठ वासुदेव की महिषी हैं और उद्धवादि परम भक्त उनका सभासद है। वहीं पर उत्तर भाग में

= इन सबका स्पष्टीकरण पद्मपुराण वृन्दाबन महात्म्य में है।

उत्तरे दिव्य उद्याने हरिचन्दनसंभृते ॥
तत्राधस्तु स्वर्णपीठे मणिमंडपमण्डिते ।
तत्रोपरि च रेवत्या संकर्षणहलायुधम् ॥
पूर्वोद्याने महारम्ये सुरद्रुमतलाश्रये ।
तस्याधस्तु महापीठे हेममंडपमण्डिते ॥
श्रीमत्याउषया श्रीमदनिरुद्धं जगत्पतिम् ।
प्राचीरं दक्षिणे भागे मंजुमुक्तान्तरस्थिते ।
अनन्तवृक्षमूलस्य मणिमण्डितमन्दिरे ।
प्रद्युम्नेन रतीदेवी तत्रोपरिसमास्थिता ॥

हरिचन्द के अधो भाग मणिमण्डप में स्वर्ण के पीठ पर रेवती सहित संकर्षण व्यूह विराजते हैं । एवं पूर्व भाग के उद्यान (बगीचा) में कल्पतरु के नीचे मणि मण्डप में महापीठ पर श्रीमती उषा देवी के साथ अनिरुद्ध विराजमान है और दक्षिण भाग में मुक्तागृह में अनन्त वृक्ष मूल में रतिदेवी के साथ प्रद्युम्न विराजते हैं । उसके नीचे आधार शक्ति से धृत महापीठ पर ..... तत्रस्थ रूप का ध्यान करते हुए विराजते हैं । उसके बाहिर स्फटिक मय अति मनोहर भगवद्धाम के चारों तरफ व्याप्त परिखाकार भवन में आगे ब्रह्मा महादेव प्रभृति देवतायें दक्षिण भाग में सनकादिक मुनि सब भगवान् का ध्यान करते हैं, पुनः पुनः उनके ही चरण में दृढ़ानुराग चाहते हैं ।

उसके बाहर प्रवालादि से मनोहर प्राचीर में कृष्ण वर्ण, शङ्ख, चक्र, गदा, पद्मधारी विष्णु द्वारपाल हैं एवं शङ्ख चक्र गदा

तस्याधस्तु महापीठे आधारशक्तिकल्पिते ।
तत्रस्थतद्रूपध्यानतत्परम्..... ॥
तद्बाह्ये स्फाटिके श्रीमत्प्राचीरे सुमनोहरे ।
चतुर्दिक्ष्वावृते दिव्ये प्रतिदीप्तिसमुज्वले ॥
अग्रे सुरगणाः सर्वे सुरेन्द्रविधिशङ्कराः ।
दक्षिणे मुनिवृन्दैश्च शुद्धसत्वान्वितात्मभिः ॥
तत्पृष्ठे गोपमुख्यैश्च सनकाद्यैर्महात्मभिः ।
वाञ्छान्ति तत्पादांभोजे निश्चलं प्रेमसाधनम् ॥
तद्बाह्ये तु प्रवालाद्यैः प्राचीरे सुमनोहरे ।
कृष्णं चतुर्भुजं विष्णुं पश्चिमे द्वारपालकम् ॥*
शङ्खचक्रगदापद्मकिरीटादिविभूषितम् ।
रक्तं चतुर्भुजं विष्णुं शङ्खचक्रगदाधरम् ॥
किरीटकुण्डलोद्दिप्तं द्वारपालं समुत्तरे ।
गौरं चतुर्भुजं विष्णुं शङ्खचक्रगदायुधम् ॥
पूर्वद्वारे द्वारपालं हरिवर्णं चतुर्भुजम् ।
कृष्णवर्णं चतुर्बाहुं दक्षिणे द्वारपालकम् ॥

धारी रक्तवर्ण विष्णु उत्तर दिशा के द्वारपाल हैं। एवं शङ्ख, चक्र, गदा, पद्मधारी, किरीटादि धारी गौरवर्ण विष्णु पूर्व द्वार के द्वारपाल हैं। एवं शङ्ख, चक्र, गदा, पद्मादि धारी पीतवर्ण विष्णु

---

* यह सब पद्मपुराण वृन्दावन महात्म्य में स्पष्ट प्रतिपादित है।

एतद्यंत्रं महागोप्यं वैष्णवानां सुदुर्ल्लभम् ।
इत्थं चिन्तयित्वा पूजयति मनसावा ये परमं ज्ञानं
लभन्ति ते प्रेमभक्त्या सुवैष्णवा भवन्ति ॥

इत्याथर्वणे पुरुषार्थबोधिन्यां यंत्रराजकथने
एकादशः प्रपाठकः

पश्चिमादौ क्रमेण सेव्यं ललितामूलमण्डलं पश्चिमे ललिता ताम्बूलं, वायव्ये, श्यामला गन्धपात्रं कौरवे श्रीमती चमरं छत्रं ऐशान्यां हरिप्रिया रत्नमालां पूर्वे-

---

दक्षिण द्वार के द्वारपाल हैं। इस परम गोप्य वैष्णवों को भी दुर्ल्लभ महायन्त्र का जो पूजन तथा ध्यान करता है वह परमज्ञान तथा विशुद्ध प्रेमाभक्ति को प्राप्त होता है।

इति अथर्वणे पुरुषार्थबोधिन्युपनिषदि यंत्रकथनं नाम
एकादशः प्रपाठकः

पूर्व प्रपाठक प्रदर्शित यन्त्र पूजा करके तदनन्तर मूल-मण्डल की पूजा करनी चाहिये, जिसमें तत्तद्दिशाओं में तत्तदुपकरणों को लिये हुई उन-उन सखियों की भावना निम्नोक्त प्रकार से करनी चाहिये। यथा--

पश्चिम दिशा में ताम्बूल को लिये हुई श्रीललिताजी की, वायव्य में गन्ध-पात्र लिये हुई श्रीश्यामला की, उत्तर में चमरछत्र लिये

विशाला श्वेतपत्रं अश्लेषा तुलसीमालां अग्नौ शैव्या याम्ये पद्मा भोजपात्रं नैऋते भद्रा पट्टवस्त्रं अग्रे चन्द्रावली मुक्तामालां, चित्ररेखा वनमालां, चित्रतल्पा सुधापात्रं, मृदांगी पद्ममालां, श्रीदेवी रत्नछत्रं, शशिरेखा पीतवस्त्रं, कृष्णप्रिया मणिपादुकां, कृष्णवल्लभा चित्रकाष्ठं, वृन्दावती नीलछत्रं, धूपपात्रं मनोहरा, घनसारं योगानन्दा, परमानन्दा व्यजनं, सत्यानन्दा स्वर्णस्थालीं करेण प्रेमानन्दा जलपात्रं कृष्णसेवानियोजिताः ।

हुईं श्री श्रीमतीजी की एवं ईशान में रत्नमाला लिये हुईं श्रीहरिप्रियाजी की, पूर्व में श्वेत पत्र को लिये हुईं श्रीविशालाजी की, अग्नि दिशा में तुलसी माला लिये हुईं श्रीअश्लेषाजी और श्रीश्यामलाजी की दक्षिण में भोजन-पात्र लिये हुईं, श्रीपद्माजी की, नैऋत्य में पट्ट वस्त्र को लिये हुईं श्रीभद्राजी की भावना करनी चाहिये। इसी प्रकार भगवान् के सामने मोतियों की माला लिये हुईं श्रीचन्द्रावलीजी और वनमाला लिये हुईं चित्ररेखा, अमृतकलश को लिये हुईं श्रीचित्रतल्पाजी, पद्म की माला लिये हुईं मृदांगीजी, रत्नछत्र को लिये हुईं श्रीदेवीजी, पीतवस्त्र लिये हुईं शशिरेखाजी, मणिमय पादुका लिये हुईं श्रीकृष्णप्रियाजी, चित्रकाष्ठ (पञ्चरङ्ग छड़ी) लिये हुईं श्रीकृष्णवल्लभाजी, नीलछत्र को लिये हुईं श्रीवृन्दावतीजी धूप-पात्र [illegible] लिये हुईं श्रीपरमानन्दाजी, सुवर्ण का थाल लिये हुईं श्रीसत्यानन्दाजी, कर-कमल में जल-पात्र को

किशोरी रहस्यालापे प्रथमा सहजानन्दा, परानन्दा परात्मिका एता गोप्यः कृष्णाग्रे नृत्ययुक्ता सेव्या। रामानन्दा सिद्धा च सिद्धगायिनी, एवं गीतगायनं जया भद्रा पद्मा पद्मावती एता मृदङ्ग वाद्यं, सत्यानन्दा जयानन्दा सानन्दा शुभा दया, सुदया च क्षेमलोमा कृपा लोमा कात्या वेणुवाद्यं, कृष्णप्राणकरी प्रेमविलासिनी ईश्वरी प्रेमरमा प्रेमपरमेश्वरी, अत्र मृदङ्गादिवादन प्रेमोन्मदा प्रेमसिद्धा प्रेमधारा प्रियम्वदा प्रेमोन्मादा प्रेमसाध्या प्रेमगीता प्रियंकरी वीणावादनतत्परा।

लिये हुई श्रीप्रेमानन्दाजी; इस प्रकार ये सभी सखियाँ श्रीनंदनन्दन की सेवा में संलग्न रहती हैं।

रासकालीन आलाप में श्रीकिशोरीजी प्रथमा अर्थात श्रेष्ठ हैं और वे सहजानन्द परानन्द एवं परात्पर स्वरूप हैं।

मधुर-मधुर गानपूर्वक श्रीकृष्णचन्द्र के आगे नृत्य करने वाली रामानन्दा, सिद्धा और सिद्धगायिनी इन तीन गोपिकाओं की भावनामयी पूजा करनी चाहिये। एवं जया, भद्रा, पद्मा, पद्मावती, सत्यानन्दा, जयानन्दा, सानन्दा, शुभा आदिक मृदङ्ग बजाने वाली और सुदया, क्षेमलोमा, कृपालोमा, कात्या इन वेणु बजाने वाली एवं वेणुवादन के सङ्ग मृदङ्ग बजाने वाली कृष्णप्राणकरी, प्रेमविलासिनी, ईश्वरी, प्रेमरमा, प्रेमपरमेश्वरी, इनकी और प्रेमोन्मदा, प्रेमसिद्धा, प्रेमधारा, प्रियंवदा, प्रेमोन्मदा, प्रेमसाध्या, प्रेमगीता, प्रियंकरी इन वीणा बजाने वालियों की भावना करनी चाहिये।

प्रथमा दया साध्या प्रपमा जयन्ती जया निश्चला यमुना गङ्गा सुभद्रांगी शुभ्रभूषणा रवावादनं, विमला निर्म्मला बाला नीला सुशीला स्वर्णरूपा स्वरूपिका कांस्यवाद्यं हेला चेला सुचेला, तरला विमला स्वरूपा शुभ्ररूपा स्वर्णगात्री शुभदा यन्त्रवाद्यादि, कमला सुवला खेला सानन्दा कुमुदा मन्दा सुमन्दरा सुखदा रेसा रत्नगात्री जयप्रदा तालवादनं, कपिला पिङ्गलाक्षी-कुटिला, कृष्णपिङ्गला कुंडला हारी मण्डली मण्डनप्रिया काष्टवाद्यम् ।

सोमपाऽमृतपा सौम्या शुभा राधा* स्वयंवरा शंख

इसी प्रकार रवा (वाद्य विशेष) को बजाती हुई, प्रथमा दया आदि एकादश और कांस्य (झल्लर आदि) वाद्य बजाती हुई विमला आदि सात ७ एवं सितार आदि यन्त्रों वाद्यों को बजाती हुई हेला आदि ९ नव सखी तथा ताल बजाने वाली कमला आदिक एकादश ११, और काष्ट वाद्य (टपटपी, खरताल) बजाने वाली कपिला आदि नव सखियों की भावना करनी चाहिये । * मुख्य राधा से अन्या ।

शंख बजाती हुई, सोमपा, अमृतपा सौम्या, शुभा-राधा स्वयंवरा, इनकी और सरंगी बजाती हुई सिद्धैश्वर्या, वेताला

वाद्यं, सिद्धैश्वर्या तु वेताला गंडपाली शुचिस्मिता सूत्र-वाद्यं रुक्मिणी, वेताली सिद्धैश्वर्या एता मृदलावाद्यं तत्परा वालेश्वरी सुकृष्णा नेपाली नाकुला तथा एता गोप्यः सावधाना नियुक्ताः ।

इत्यथर्वणे पुरुषार्थ बोधिन्याः द्वादश प्रपाठकः ।

गंडपाली शुचिस्मिता इनकी, तथा मृदल (तबले) बजाती हुई रुक्मिणी वेताली सिद्धैश्वर्या और सावधान तथा गीत वाद्य में नियुक्त वालेश्वरी, सुकृष्णा नेपाली, नाकुला इत्यादिक सखीजनों की भावना करनी चाहिये ।

इति श्री अथर्वणे पुरुषार्थ बोधिन्मुपनिषदिद्वादश प्रपाठक भाषानुवादः ।*

यहाँ द्वादश प्रपाठक सम्पूर्ण ब्राह्मण के अभिप्राय से लिखा गया है । उपनिषत् तो केवल छै प्रपाठक हैं । मूल कोपी ब्राह्मणाभिप्रायेणैव लिखी है ।

* ॐ नमः श्रीराधिकायै *

अथ श्रीराधिकोपनिषत्

ओमथोर्ध्वमन्थिन ऋषयः सनकाद्या भगवन्तं हिरण्यगर्भमुपासित्वोचुः देव कः परमो देवः, का वा तच्छक्तयः, तासु च का *वरीयसी भवतीति सृष्टिहेतुभूता च केति ॥ सहोवाच । हे पुत्रकाः शृणुतेदं ह वाव गुह्यादगुह्यतरमप्रकाश्यं, यस्मै कस्मै न देयम् । स्निग्धाय, +ब्रह्मवादिने, गुरुभक्ताय, देवमन्यथा दातुर्महदवम्भवतीति । कृष्णो ह वै हरिः परमो देवः

---

* ॐ नमः श्रीराधिकायैः *

अथ श्रीराधिकोपनिषत् ।

अथ ऊर्ध्वरेता सनकादि महर्षियों ने भगवान् श्रीब्रह्माजी की स्तुति करके यों पूछा । हे देव ! कौन से सर्व प्रधान देवता हैं और उनकी कौन-कौन सी शक्तियाँ हैं, उन शक्तियों में सर्व श्रेष्ठ सृष्टि का कारण कौनसी शक्ति है ? इनके वचन सुनकर श्रीब्रह्माजी बोले—हे बेटा ! सुनो किन्तु इस अति गोप्य वार्त्ता को प्रकट मत करना, और ऐरे गैरे को इसे मत बताना । हाँ, जो स्नेही हों, ब्रह्मवादी हों, गुरुभक्त हों, उन्हें देना, नहीं तो देने वाले को महापाप होगा । श्रीहरि श्रीकृष्ण ही परम देव हैं,

---

* गरीयसीति वा पाठः + ब्रह्मचारिणे इतिवापाठः

षड्विधैश्चैश्वर्यपरिपूर्णो भगवान् गोपीगोपसेव्यो वृन्दा-ऽऽराधितो वृन्दावनादिनाथः, स एक एवेश्वरः । तस्य हवै द्वैततनु र्नारायणोऽखिलब्रह्माण्डाधिपतिरेकोंऽशः प्रकृतेः *प्राचीनो नित्यः । एवं हि तस्य शक्तयस्त्वनेकधा । आह्लादिनी, सन्धिनी, ज्ञानेच्छा, क्रियाद्या, बहुविधाः शक्तयः । तास्वाह्लादिनी ×वरीयसी परमान्तरङ्गभूता राधा, कृष्णेन आराध्यत इति राधा कृष्णं समाराधयति सदेति राधिका गान्धर्वेति व्यपदिश्यत इति । अस्या एव कायव्यूहरूपा गोप्यो महिष्यः श्रीश्चेति । येयं राधा यश्च कृष्णो रसाब्धिर्देहैनैकः क्रीड़नार्थं द्विधाऽभूत् ।

ये छहों ऐश्वर्यों से परिपूर्ण श्रीभगवान् हैं, यह गोपियों और गोपों के सेव्य हैं, ये वृन्दा के द्वारा आराधित हैं, ये श्रीवृन्दावन के अधीश्वर हैं, और ये ही एक मात्र सर्वेश्वर हैं । उन्हीं श्रीहरि के नारायण भी एक रूप हैं, जो अखिल ब्रह्माण्ड के अधीश्वर हैं । ये ही एक श्रीकृष्ण स्वभावतः प्रकृति से पर और नित्य हैं । इस प्रकार इनकी शक्तियाँ भी अनेक हैं । आह्लादिनी सन्धिनी, ज्ञानेच्छा, क्रिया आदि बहुत सी इनकी शक्तियाँ हैं । उनमें आह्लादिनी सर्व प्रधान शक्ति हैं, ये परम अन्तरङ्ग भूता हैं, ये "राधा" हैं, जिनका आराधन श्रीकृष्ण भी करते हैं ।

---

* पराचीनो इति वा पाठः × गरीयसीति वा पाठः

एषा वै हरेः सर्वेश्वरी सर्वविद्या सनातनी कृष्णप्राणाधिदेवी चेति, विविक्ते वेदाः स्तुवन्ति, यस्या गतिं[१] [२]ब्रह्मभागा वदन्ति । महिमाऽस्याः स्वायुर्मानेनापिकालेन वक्तुं न चोत्सहे । सैव यस्य प्रसीदति, तस्य करतलावकलितम्परमधामेति । एतामवज्ञाय यः कृष्णमाराधयितुमिच्छति, स मूढतमोमूढतमश्चेति । अथ हैतानि नामानि गायन्ति श्रुतयः ।

श्रीराधा श्रीकृष्ण का सदा आराधन किया करती हैं। श्रीराधिका को गन्धर्वा भी कहते हैं। इन्हीं श्रीराधिका के शरीर से गोपियां, श्रीकृष्ण की महीषियां और लक्ष्मी हुई हैं। ये जो श्रीकृष्ण हैं, सो रससागर श्रीकृष्ण ही एक रूप से दो रूप होगये हैं। यह श्रीकृष्ण का युगल स्वरूप भक्तोद्धारिणी क्रीड़ा के निमित्त ही हुआ है। यह श्राराधा सर्वेश्वर भगवान् श्रीकृष्ण भी सर्वेश्वरी हैं, ये श्रीकृष्ण की समस्त विद्याओं में सनातनी हैं, ये श्रीकृष्ण की प्राणाधिका प्रेयसी हैं, ऐसा एकान्त में चारों वेद भी स्तुति किया करते हैं; और जिनको गति ब्रह्मवादी ऋषि जानते और कहते। इनकी महिमा को हम (ब्रह्मा) अपने आयु पर्यन्त भी वर्णन करने में सर्वथा असमर्थ हैं। वे ही श्रीराधा जिस पर प्रसन्न होती हैं, उसके हाथ में परमधाम आजाता है। इन (राधा) की अवज्ञा करके जो श्रीकृष्ण के

---

१ गाथा; इति वा पाठः २ ब्रह्मभागमिमिवापाठः ।

राधा रासेश्वरी रम्या कृष्णमन्त्राधिदेवता ।
सर्वाद्या सर्वबन्द्या च वृन्दावनविहारिणी ॥
वृन्दाराध्या रमाऽशेषगोपीमण्डलपूजिता ।
सत्या सत्यपरा सत्यभामा श्रीकृष्णवल्लभा ॥
वृषभानुसुता गोपी मूलप्रकृतिरीश्वरी ।
गान्धर्वा राधिका रम्या रुक्मिणी परमेश्वरी॥
परात्परतरा पूर्णा पूर्णचन्द्रनिभानना ।
भुक्तिमुक्तिप्रदा नित्यं भवव्याधिविनाशिनी ॥

इत्येतानि नामानि यः पठेत् स जीवन्मुक्तो भवति ।

आराधन करने की इच्छा करता है, वह मूढ़तम है । उन (श्री राधा) के ये नाम हैं—

१-राधा, २-रासेश्वरी, ३-रम्या, ४-कृष्णमन्त्राधिदेवता, ५-सर्वाद्या, ६-सर्वबन्द्या, ७-वृन्दावनविहारिणी, ८-वृन्दाराध्या, ९-रमा, १०-अशेषगोपीमण्डलपूजिता, ११-सत्यासत्यपरा, १२-सत्यभामा, १३-श्रीकृष्णवल्लभा, १४-वृषभानुसुता, १५-गोपी, १६-मूलप्रकृति, १७-ईश्वरी, १८-गन्धर्वा, १९-राधिका, २०-रम्या, २१-रुक्मिणी, २२-परमेश्वरी, २३-परात्परतरा, २४-पूर्णा, २५-पूर्णचन्द्रनिभानना, २६-भुक्तिमुक्तिप्रदा, २७-भवव्याधिविनाशिनी ।

इत्याह हिरण्यगर्भो भगवानिति सन्धिनी तु धामभूषण-शय्यासनादिमित्रभृत्यादिरूपेण परिणता मृत्युलोकावतरणकाले मातृपितृरूपेण चाऽऽसीदित्यनेकावतारकारणा ज्ञानशक्तिस्तु क्षेत्रज्ञशक्तिरिति इच्छान्तर्भूता माया सत्त्वरजस्तमोमयीवहिरङ्गा जगत्कारणभूता सैवाऽविद्यारूपेण जीवबन्धनभूता क्रियाशक्तिस्तु लीलाशक्तिरिति

इन (सप्तविंशति) २७ नामों को जो पढ़ते हैं, वे जीवन्मुक्त हो जाते हैं। ऐसा भगवान् श्रीब्रह्माजी ने कहा है। इस प्रकार श्रीकृष्ण की आह्लादिनी शक्ति श्रीराधा का वर्णन किया, अब श्रीकृष्ण की सन्धिनी शक्ति का वृत्तान्त सुनो। यह (सन्धिनी) शक्ति, धाम, भूषण, शय्या, आसन आदि तथा मित्र भृत्यादि रूप से परिणाम को प्राप्त होती है और मृत्यु लोक में अवतार लेने के समय माता और पिता रूप से परिणाम को प्राप्त होती है। जो अनेक अवतार का कारण है ज्ञान शक्ति ही को क्षेत्रज्ञ शक्ति कहते हैं और इच्छा शक्ति के अन्तर्भूत मायाशक्ति है वही सत्त्वरजतमो गुण रूपा है और वहिरङ्ग है, जड़ है, और जड़ होने के कारण श्रीभगवान की दृष्टि पड़ने से अनन्त कोटि ब्रह्माण्डों को उत्पन्न करती है और यही माया अविद्या रूप से जीव का बन्धन करती है और

य इमामुपनिषदमधीते, सोऽव्रती व्रतीभवति, स वायुपूतो भवति, स सर्वपूतो भवति, राधाकृष्णप्रियो भवति स यावच्चक्षुः पातं पंक्तीः पुनाति । ॐ तत्सत् ।

इति श्री श्रीमद्वेदे ब्रह्मभागे परमरहस्ये
श्रीराधिकोपनिषत् सम्पूर्णा ।

क्रियाशक्ति ही लीलाशक्ति है जो इस उपनिषद् को पढ़ते हैं वे अव्रती भी व्रती हो जाते हैं, वे समस्त तीर्थों में स्नात हो जाते हैं, वे अग्निपूत हो जाते हैं, वे वायु पूत होजाते हैं, वे सर्वपूत होजाते हैं, वे श्रीराधाकृष्ण के प्यारे होजाते हैं और वे जहां तक दृष्टिपात करते हैं, वहाँ तक सबों को पवित्र कर देते हैं । ॐ तत्सत् ।

यह श्रीमद्ऋग्वेदान्तर्गता श्रीराधिकोपनिषत् की भाषा टीका श्रीनिम्बार्काचार्यवीथीपथिकश्रीहरिप्रियाशरणोपनामकश्रीदुलारेप्रसादशास्त्रिणा।

कृता समाप्ता ।

अथ अथर्ववेदीय–

राधिकातापिनी उपनिषत् ।

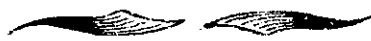

ब्रह्मवादिनो वदन्ति, कस्माद्राधिकामुपासते आदित्योऽभ्यद्रवत् ॥ १ ॥ श्रुतय ऊचुः। सर्वाणि राधिकाया दैवतानि सर्वाणि भूतानि राधिकायास्तां नमामः॥२ देवतायतनानि कम्पन्ते राधाया हसन्ति नृत्यन्ति च सर्वाणिराधादैवतानि । सर्वपापक्षयायेति व्याहृतिभिर्हुत्वाऽथ राधिकायै नमामः ॥ ३ ॥ भासा यस्याः कृष्ण देहोऽपि गौरो जायते देवस्येन्द्रनीलप्रभस्य । भृंगाः काकाः कोलिलाश्चापि गौरास्तां राधिकां विश्वधात्रीं नमामः ॥४॥ यस्या अगम्यतां श्रुतयः सांख्ययोगा वेदान्तानि ब्रह्मभावं वदन्ति। न यां पुराणानि विदन्ति सम्यक् तां राधिकां देवधात्रीं नमामः ॥५॥ जगद्धर्तुर्विश्वसंमोहनस्य श्रीकृष्णस्य प्राणतोऽधिकामपि । वृन्दारण्ये स्वेष्टदेवीं च नित्यं तां राधिकां वनधात्रीं नमामः ॥ ६ ॥ यस्या रेणुं पादयोर्विश्वभर्ता धरते मुर्ध्नि रहसि प्रेमयुक्तः । सूस्तवेणुः कबरीं न स्मरेद्यल्लीनः कृष्णः क्रीतवत्तु तां नमामः ॥७॥ यस्याः

क्रीडां चन्द्रमा देवपत्न्यो दृष्ट्वा नग्ना आत्मनो न स्मरन्ति। वृन्दारण्ये,स्थावरा,जंगमाश्च भावाविष्टां राधिकां तां नमामः ॥८॥ यस्या अङ्के विलुण्ठन् कृष्णदेवो गोलोकाख्यं नैव सस्मार धामपदं सांशा कमला शैलपुत्री तां राधिकां शक्तिधात्रीं नमामः ॥ ९ ॥ स्वरैः ग्रामैश्च त्रिभिर्मूर्च्छनाभिर्गीतां देवीं सखिभिः प्रेमबद्धा। ब्राह्मीं निशांयाऽतनोदेकशक्त्या वृन्दारण्ये राधिकां तां नमामः ॥ १० ॥ क्वचिद्भूत्वा द्विभुजा कृष्णदेहा वंशीरन्ध्रैर्वादयामासचक्रे। यस्याभूषां कुन्दमन्दारपुष्पैर्मालांकृत्वा ऽनुनयेद्देवदेवः ॥११॥ येयं राधा यश्च कृष्णो रसाब्धिर्देहश्चैकः क्रीडनार्थं द्विधाऽभूत्। देहो यथा छायया शोभमानः शृण्वन् पठन् याति तद्धाम शुद्धम् ॥ १२ ॥ वशिष्टं च बृहस्पतिं चार्वागध्यापयति यजमानस्यवार्हस्पत्यश्च ॥ १३ ॥

इति अथर्ववेदीयश्रीराधिकातापिनी उपनिषद्।

अथ राधिकातापिनी उपनिषद्भाषानुवादः।

ब्रह्म वादि ऋषियों के चित्त में यह तर्क उत्पन्न हुई कि अन्य उपासनाओं को छोड़ श्री राधिका की ही उपासना क्यों की जाती है। उसी क्षण एक तेज का पुञ्ज प्रकट-हुआ। वह तेज श्रुतियों का समुदाय ही था ॥ १ ॥ श्रुतियों ने कहा ॥

सम्पूर्ण ही उपास्य देवताओं में देवत्व शक्ति श्रीराधिका जी से ही आविर्भूत होती है अत एव समस्त अधिभूत और अधिदेवों की जननी राधाजी को हम सब नमन करती हैं ॥२॥

श्री राधिकाजी की कृपा के लवलेश मात्र से देवता आनन्दित हो होकर हँसते और नृत्य करते हैं और उनकी भ्रुकुटी के नेक ही वक्र होने पर थर थर कापते रहते हैं। अतः हमें किसी प्रकार के दूषण न दवालेवें, इसी के लिये व्याहृतियों से स्तवन करती हुई हम श्रीराधाजी को नमन करती हैं।

इन्द्रनील मणियों के समान भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र का श्याम विग्रह भी जिसकी कान्ति से गौर प्रतीत होता है। काकादि जैसे क्रूर कर्मा प्राणी भी जिसकी दृष्टि से पुनीत बन जाते हैं उस विश्व माता श्रीराधिकाजी को हम सब नमन करती हैं ॥४॥

जिसका-हम श्रुतियां और सांख्य योग वेदान्त भी पार नहीं पा सकते एवं पुराण भी जिस का वर्णन नहीं कर सकते, उस ब्रह्मस्वरूपिणी श्रीराधिकाजी को हम प्रणाम करतीं हैं ॥५॥ जगन्नियन्ता विश्वविमोहन श्रीनन्दनन्दन की प्राणप्रिया हमारी परमोपास्या शरणागतों को अभय देने वाली श्रीराधिकाजी को हम सब प्रणाम करती हैं ॥६॥

प्रेम परायण विश्वम्भर श्रीनन्दनन्दन रास केलि में जिनकी चरण रजको भी मस्तक पर धर लेते हैं, और जिनके प्रेम में अपनी मुरली-लकुट आदि विभूतियों को भी भुला देते हैं, एवं स्वयं बिके हुये से प्रतीत होते हैं, उन श्री राधिकाजी को हम नमन करती हैं, ॥७॥

वृन्दावन में जिसकी अद्भुत लीला देख कर चन्द्रमा और देवाङ्गनायें निमग्न होकर अपने शरीरों की सुधि बुधि भूल जाती हैं, और प्रेमोन्मत्त चर भी अचर की भाँति स्तब्ध बन बैठते हैं उन श्रीराधिका जी को हम प्रणाम करती हैं ॥८॥

भगवान् श्रीकृष्ण चन्द्र जिनकी अङ्गरूपी शय्या आगे सच्चिदानन्द स्वरूप अपने गोलोक का भी स्मरण नहीं करते, लक्ष्मी और पार्वती आदि सभी शक्तियां जिसके अंश हैं उस शक्तिसिन्धु श्रीराधिका जी को हम प्रणाम करती हैं ॥९॥

सखियां स्वर, ग्राम, और मूर्च्छनाओं के, द्वारा जिसके गुणों का गान करती हैं, और उनके प्रेम वस हो जिसने अपनी एक शक्ति से वृन्दावन में ब्राह्मी रात्रि रची, अर्थात् रास विलास की आनन्द सुधाका अविच्छिन्न रूप से पान कराया, उस श्रीराधिका जी को हम प्रणाम करती हैं ॥१०॥

कभी द्विभुज कृष्ण रूप धारण करके सुन्दर स्वरों पर मृदुल अङ्गुलि रख कर मुरली बजाती हैं, और श्रीनन्द-नन्दन कुन्द कल्पवृक्ष आदि के, पुष्पों से जिनका शृङ्गार करते हैं उन श्री राधिका जी को हम नमस्कार करती हैं ॥११॥

श्री राधा और कृष्ण दोनों एक ही रस के समुद्र हैं, केवल भक्तों को आनन्द देने वाली लीलाओं के लिये ही दो रूप बने हैं, वस्तु तस्तु ये दो रूप भी देह और छाया के सदृश ही हैं, कभी किसी दशा में भी इनका वियोग नहीं होता, इनके चरितामृत को कर्णों द्वारा पीकर भक्तजन विशुद्धपद की प्राप्ति कर लेते हैं, अर्थात् सदा के लिये अमर बन जाते हैं ॥१२॥

अब इस विद्या की गुरु परम्परा बताते हैं यह तत्त्व ज्ञान आदित्य से वशिष्ठ को उनसे वृहस्पति को उनसे उनके शिष्य कच इन्द्रादिको प्राप्त हुआ। इति।

इतिश्री विद्याभूषण ब्रह्मचारिश्रीव्रजवल्लभशरणसांख्यतीर्थकृतानुवादः॥

अथ श्रीवेदान्तकामधेनुस्थाश्लोकद्वयी।

स्वभावतोऽपास्तसमस्तदोषमशेषकल्याणगुणैकराशिम्। व्यूहांगिनं ब्रह्म परं वरेण्यं ध्यायेम कृष्णं कमलेक्षणं हरिम्। अंगे तु वामे वृषभानुजां मुदा विराजमानामनुरूपसौभगाम्, सखीसहस्रैः परिसेवितां सदा स्मरेम देवीं सकलेष्टकामदाम्॥

"इति भगन्निम्बार्कमहामुनीन्द्रविरचितवेदान्तकामधेनुनामिकायां दशश्लोक्यां ब्रह्मस्वरूपनिरूपणपरंश्लोकद्वयम्॥

अत्र द्वितीयश्लोके श्रीवृषभानुजायामनुपदोक्तलक्षणश्रीकृष्णानुरूपसौभगत्वकथनेन श्रीकृष्णेऽनुपदोक्तानामशेषाणां धर्म्माणां श्रीवृषभानुजायामप्यतिदेशंसूचयति। एवंच यथा स्वभावतोऽपास्तसमस्तदोषः

अशेषकल्याणगुणैकराशिः, वासुदेवादिव्यूहानां केशवादिवैभवानां पुरुषावताराणां गुणावताराणां लीलावताराणां विलासावताराणां च अंशी परब्रह्मस्वरूपः चराचरातीतः गायत्रीशब्दार्थमुख्यभूतः निरतिशयसर्वाङ्गसुन्दरः सच्चिदानन्दविग्रहः स्वयंभगवान् श्रीकृष्णस्तथैव श्रीराधापि स्वभावापास्तसमस्तदोषाऽशेष कल्याणगुणैकराशिभूता व्यूहवैभवपुरुषावतारगुणावतारलीलावतारविलासावतारांणां पत्नीनामंशिनी ब्रह्मप्रतिष्ठाभूता चराचरातीता गायत्रीशब्दार्थमुख्यभूता निरतिशयसर्वाङ्गसुन्दरी सच्चिदानन्दविग्रहास्वयंभगवतीत्यर्थः—

एवंचैकमेवानुपदोक्तलक्षणमसमोर्ध्वमखण्डंतत्त्वम्, अनादिसिद्धरसस्वभावतयाऽनादिसिद्धनिजसत्यसंकल्पेनानादित एव निजस्वरूपमहिम्नैव युगलतया निजानुगृहीत जनैःश्रुतिभिश्च प्रमीयते । तयोर्भेदाभावादेवच नेश्वरद्वैतापत्तिः न वाऽन्योऽन्यरमणहेतुत्वेऽपि स्वात्मारामत्वव्याघातः तयोरन्योऽन्यमात्मात्मिभावात् । अतएव स्वयमेवाचार्यैः तयोर्भेद बुद्धिः निन्द्यते स्तूयते च तयोरभेदबुद्धिः संगृहीतानि चतानि वाक्यानि तदीयसाक्षाच्छिष्यैः श्रीमद्दुम्बराचार्यैः परमप्रसिद्धायां निजकृतोदुम्बरसंहितायाम्—

तद्यथा—

*कल्लोलके वस्तुतएकरूपकौ राधामुकुन्दौ समभाव-भावितौ यद्वत्सुसंपृक्तनिजाकृतीध्रुवावाराधयामो व्रज-वासिनौ सदा । संस्मृत्य संस्मृत्य युगं स्वचेतसा श्रीराधिकामाधवयो पुनः पुनः, स्वं श्रीनिवासानुगमाह शिष्यकं निम्बार्क आचर्य्यवरेश्वरो मुनिः । वक्ष्ये युगाराधनकं व्रतं शुभं भोश्रीनिवासानुग+ संनिसामय, श्रीराधिकामाधवयो र्महामते स्वैतिह्यवर्य्यैरूपवर्णितमया। श्रीयुग्मकाराधनमेव यावता सिद्ध्यन्न राधाव्रजराजपुत्रयोः, तावन्नकांचित्त्वपि सत्क्रियां चरेत् श्रीयुग्मकाराधानकं व्रतं चरन् श्रीयुग्मकाराधनमन्तरेण यत् साहित्यतोऽनर्थवहत्वतो ध्रुवम्,सत्कर्मणां चाप्यविवेकगामिनां युग्मव्यवच्छेदकृतांदुरात्मनाम् ।

तथा कृष्णः—

योऽहं स राधा किल राधिका तथा या साहमेवाद्यसमः सनातनः ।
श्रीयुग्मभक्तिस्तुनलभ्यते परा साहित्यतोनौ सततैकभावयोः ॥
सत्कर्ममात्रं क्वचिदाचरेत्तदानो वैयुगाराधनमद्व्रताग्रहः ।
अत्रैकरूपं भजतां सुदुः कृतां दोषावहत्वाद्धि सतोऽपिकर्मणः ॥

---

* जलकल्लोलकयुगलमिवेतिभावः ।

+ श्रीनिवासएवानुगः श्रीनिवासानुगः ।

× एतेनमुकुन्दसमभिव्याहारेण मुकुन्दशरणमंत्रे श्रीपद्व्याख्यार न

... हंससनकादि नारदैरित्यर्थः ।

कुमाराः—

श्रीराधिकाकृष्णयुगं सनातनं नित्यैकरूपं विगमादिवर्जितम् ।
यद्वज्जलोल्लोलयुगं मिथोरतं सद्गोचरं यावदवाप्नुयान्नतु ॥
संसेवितुं तत्र न भेदमाचरेत् श्रीराधिकाकृष्णयुगार्चनव्रती ।
दोषाकरत्वाद्धि भिदानुवर्तिनां सत्कर्मणामेवमभेद्यवादिनाम् ॥

नारदः—

यदि तु युगलसंसेवां विधातुं न शक्तो युगयुतिरहितं-त्वाराधनं नो विदध्यात् । सततमुत सयुग्माराधने सद्व्रतेहो व्रजपतिसुतयोः श्रीराधिकाकृष्णयोर्वै ॥ भजति यदि भिदामा चरँस्तत्र मूर्खो न भजनफलमाप्नोतीह दोषग्रहः स्यात् अत इ भिदया संसेव्यमानो मनीषी किमपि न करणीयं युग्मभक्ति व्रती स्यात् ॥ श्रीराधाकृष्णयुगलाराधनव्रतमंजसा अनाचरन् विरोधी स्यादेकज्योतिर्विभेदकृत् ।

तथा सम्मोहनतन्त्रे—

महादेव उदाहरत्—

गौरतेजो विना यस्तु श्यामतेजः समर्चयेत् ।
जपेद्वा ध्यायते वापि स भवेत्पातकी शिवे ॥
स ब्रह्महा सुरापी च स्वर्णस्तेयी च पंचमः ।
एतैर्दोषैर्विलिप्येत तेजोभेदान्महेश्वरि ॥
यस्माज्ज्योतिरभूद्द्वेधा राधामाधवरूपधृक् ।
तस्मादिदं महादेवि गोपालेनैव भाषितम् ॥

ब्रह्मसंहितायां—

यः कृष्णो सापि राधा या राधा कृष्ण एव सः।
अनयोरन्तर्दर्शी संसारान्न विमुच्यते ॥

श्रुतौ—

राधया माधवो देवो माधवेन च राधिका विराजते जनेषु।
योऽनयोः पश्यते भेदं न मुक्तः स्यात्स संसृतेः ॥

कृष्णोपनिषदि—

वामांगसहिता देवी राधा वृन्दावनेश्वरी।
योऽनयोः स्याद्व्यवच्छेदी ध्रुवं स तु बहिर्मुखः ॥

कुमाराः—

राधां विना मुकुंदं यस्त्वाराधयेत्स तु निष्फलः।
एकवस्तुव्यवच्छेदी श्रीमत्योः कृष्णराधयोः ॥
एवमादावकुर्वाणो युगलाराधनव्रतम्।
विफलः पातकी ज्ञेयो राधाकृष्णबहिर्मुखः ॥
युगलानुग्रहीतानां युगलाराधनव्रतम्।
श्रीराधाकृष्णयोर्ज्ञेयं परमैकान्तिनां सताम् ॥
नान्येषां तु भवेदेव तथा मे निश्चिता मतिः।
राधा कृष्णमयी साक्षादाराध्या न प्रतीयते ॥
योगिभिरपि किमुत सामान्यैर्मानवैस्तथा ॥

नारदपंचरात्रे—

हरेरर्धतनूराधा राधा मन्मथसागरा।
राधा पद्माख्यया पद्मानामगाधा तत्र योगिनाम् ॥

बृहद्गौतमीयतंत्रे—

देवी कृष्णमयी प्रोक्ता राधिका परदेवता ।
सर्वलक्ष्मीमयी स्वर्णकान्तिः सम्मोहिनी परा ॥

कुमाराः—

सर्वेषां तु दुराराध्यं राधिकाकृष्णयोः शुभम् ।
शुक्लरसविवर्ज्यानां युगलाराधनव्रतम् ॥
इति सम्मोहयन्तीव योगिभिरपि नेयते ।
आराध्या सह कृष्णेन राधा कृष्णमयी सदा ॥
सदाचारेण कुर्वाणा युगलाराधनव्रतम् ।
उपदिशंति शिष्यादीन् काशीखंडे तथेरितम् ॥
नित्यनैमित्तिके कृत्स्ने कार्तिके पापनाशने ।
गृहाणार्घ्यं मया दत्तं राधया सहितो हरे ।
एवं सम्पूजयेन्नित्यं युगाराधनसद्व्रती ।
राधिकासहितं कृष्णं दामोदरं हरिं विभुम् ॥

पाद्मे—

राधिकाप्रतिमां कार्ष्णिः पूजयेत्कार्तिके तु यः ।
तस्य तुष्यति तत्प्रीत्यै कृष्णो दामोदरो हरिः ॥
ततः प्रियतमा विष्णो राधिका गोपिकासु च ।
कार्तिके पूजनीया च श्रीदामोदरसन्निधौ ॥
वृन्दावनेऽधिपत्यं च दत्तं तस्यै प्रशीदता ।
कृष्णेनान्यत्र देवी तु, राधा वृन्दावने वने ॥

कार्तिक इत्यभिधानं तत्प्रसंगसमाहृतेः ।
न कालनियमो ज्ञेयः श्रीराधाराधनं सदा ॥

तथा ब्रह्माण्डे—

राधा कृष्णात्मिका नित्यं कृष्णो राधात्मको ध्रुवम् ।
वृन्दावनेश्वरी राधा राधैवाराध्यते मया ॥
किं च सर्वकामं समीहेत युगलाराधनव्रतात् ।
श्रीराधाकृष्णयोः पूजां तर्हि वाञ्छितमश्नुयात् ॥

तथा भागवते—

श्रियं विष्णुं च वरदावाशिषां प्रभवावुभौ ।
भक्त्या सम्पूजयेन्नित्यं यदीच्छेत्सर्वसम्पदः ॥

ब्रह्मवैवर्ते—

लक्ष्मीर्वाणी च तत्रैव जनिष्येते महामते ।
वृषभानोस्तु तनया राधा श्री र्भविता किल ॥
संपूज्या हरिणा सार्द्धं प्रेष्ठा कृष्णानपायिनी ।
साक्षात्कृष्णमयी यत्र युगेज्याव्रतधारिणाम् ॥
निष्कामेषु दधानेषु युगलाराधनव्रतम् ।
युगसेवाव्रतस्यैवम् माहात्म्यं तु निगद्यते ॥

कुमारास्तथा—

निर्माय सह कृष्णेन श्रीराधार्चां हरिप्रियां ।
साहित्येनैव सम्पूज्य नित्यमेति परां गतिम् ॥

+ एतेन श्री पदस्य राधायां शक्तिर्मुख्या इति सूचिता ।

नारदपंचरात्रे—

राधया सहितं कृष्णं यः पूजयति नित्यशः ।
भवेद्भक्तिर्भगवति मुक्तिस्तस्य करेस्थिता: ॥

एवं युगाराधनसद्व्रताग्रहात् ।
श्रीराधिकाकृष्णपदाम्बुजान्तिकम् ॥

प्राप्नोति राधाव्रजराजपुत्रयोः ।
युग्मांघ्रिसेवाविमुखस्तु पातकी ॥

तस्माद्युगाराधनसद्व्रताग्रहात् ,
नान्यं प्रकुर्वीत वृथाग्रहं सुधीः ॥

राधामुकुन्दांघ्रितटस्थितीच्छया ।
त्वेवं युगाराधनसद्व्रतं चरेत् ॥

भोः श्रीनिवासानुग वर्णितं मया ।
चैवं विदित्वा युगसेवनव्रतम् ॥

संचारयिष्यन् स्वजनेषु, सर्वतः ।
त्वं धारयादौ ह्यनुवृत्तितः सदा ॥

राधामुकुन्दौ सततानपायिनौ ।
एकान्तभावेन निषेवणात्मकौ ॥

वन्दे युगाराधन सद्व्रतेक्षितौ ।
कृष्णं सदैतिह्यनिदानविग्रहम् ॥

ह्याचार्य्यवर्य्यं च चतुःसनं स्वकम् ।
श्रीनारदं स्वीयगुरुं नमामि च ॥

श्रीयुग्मकाराधनसद्व्रतप्रदान् ॥
एवं स्वशिष्याय निजानुवर्तिने

यः श्रीनिवासानुगताय धीमते ।
सत्संप्रदायानुसृतेः समागतम् ॥
श्रीराधिकामाधवयोः स्वसेव्ययोः ।
प्रादात् प्रसिद्धं युगसेवनव्रतम् ॥
नानाव्यवस्थानविवेकसंयुतम् ।
तं ह्यादिभूतं शरणं व्रजाम्यहम् ॥
निम्बार्कमात्मीयगुरुं सुदर्शनम् ।

इति श्रीनिम्बार्कमहामुनीद्रपूज्यपादशिष्यश्रीमदुम्बराचार्य्य संगृहीतायां श्रीश्रीनिवासनिम्बार्क सम्वादरूपायामुदुम्बरसंहितायां युग्मव्रतनिरूपणम्, समाप्तम् ।

एवमेव शरणमंत्रव्याख्याने प्रपन्नसुरतरुमंजर्य्यां श्रीसुन्दरभट्टाचार्य्यपादैरपि "सा च वक्ष्यमाणाचिन्त्यानन्तनिरतिशयभगवत्स्वरूपगुणशक्त्याद्यनुरूपिणीति । यथाह भगवान् पराशरः—"देवत्वे देवरूपेयं मानुषत्वे च मानुषी । विष्णोर्देहानुरूपाम्वै करोत्येषात्मनस्तनुम्" इति ॥ बृंहति बृंहयति तस्मादुच्यते परम्ब्रह्म" इति श्रुतेर्य्यथा स्वरूपेण गुणशक्त्यादिभिश्च बृहत्तमो वेदान्तप्रतिपाद्यः "सदा पश्यन्ति सूरयः" इति श्रुतेर्नित्यमुक्तजनतानुभूयमानो भगवाँच्छ्रीपुरुषोत्तमस्तथैषापीतिभावः इति । पत्नीति वचनात् वक्ष्यमाणानां भगवदीयगुणानामत्रातिदेशोऽवगम्यते वक्ष्यमाणगुणादयोऽप्यत्रानुसंधेया इत्यर्थः, इति चोक्तम् ।" एनेन राधामुकुन्दयोः सर्वथा समान

स्वरूपगुणशक्त्यादिमत्वकथनेन श्रीकृष्णांशभूतवासुदेवादिव्यूहादि पत्नीनामंशिनीत्वमप्युक्तं भवति इतिबोध्यम् । नैतावता, ईश्वर-द्वैतापत्तिः तयोरेकात्मत्वात् श्रीकृष्णस्थानामेव निरुक्तनिखिल धर्म्माणां देव्यामपिपर्य्यायत्वादित्युक्तम् । अतएव च गोपाल-तापिनीश्रुतौ—

कृष्णात्मिका जगत्कर्त्री मूलप्रकृतिरुक्मिणी ।
व्रजस्त्रीजनसंभूतः श्रुतिभ्यो ब्रह्मसंगतः,

इत्यत्र—श्रीराधायाः कृष्णात्मकत्वमुक्तम् अस्यचायमर्थः जगत्कर्त्रीति, अविशेषादशेषजगतां कर्त्री पालयित्री संहत्री, मूल प्रकृतिरिति, मूलं च तत्प्रकृतिरितिव्युत्पत्त्या-श्रीकृष्ण-पत्नीनां सर्वासां मूलभूता-रुक्मिणीति रुक्मवद्गौरांगी रुक्मिणी त्यपरपर्य्यायाच या व्रजस्त्रीजनसंभूता, अर्थात् व्रज-स्त्रीजनैः निजकायव्यूहभूताभिः निजानपापिनीभिः ललितादिभिः संभूता-संभूय मिलिता सहिता" यद्वा व्रजस्त्रीजनः श्रीकीर्तिमाता तत्संभूतात्वेनं जन्यात्वेन पुत्रीत्वेनोपलक्षिता या राधा सा कृष्णात्मिका-अतएव सापि अर्धमात्रात्मिका, इति—एवं च सजलघननीलत्वेन पुरुषाकारत्वेन च प्रमीयमाणात् नन्द-नन्दनात् वृषभानुनन्दिन्यां सुवर्णगौरीत्वेन वनिताऽकारत्वेन प्रमीयमाणत्वमात्रं विशेषः अन्यत्तु सर्वथा समानत्वमेव एतदर्था-भिव्यंजनायैव राधादिसंज्ञांत्यक्त्वा रुक्मिणीत्येव संज्ञोक्ते-त्यपि बोध्यम् । रुक्मिणीपदेनात्र द्वारकेश्वर्य्या न ग्रहणं तथासति व्रजस्त्रीजनसंभूतत्वविशेषणस्यानन्वयापत्तेः अर्थान्तरकल्पनाया मानाभावाच्चेत्यपि बोध्यम् ।

श्रीवल्लभाचार्यपादानामप्येष एव सिद्धान्तः, तदुक्तं तदीयहार्दविद्भिः तदीयप्रपौत्रैः श्रीहरिरायगोस्वामिचरणैः मूलरूपसंशयनिराकरणनाम्नि प्रकरणनिबन्धे—

मुख्यशक्तिस्वरूपं तु स्त्रीभावो हरिरुच्यते ।
तत्र स्त्र्यंशः पराशक्तिः, भावांशः कृष्णशब्दितः ॥
यथाहि सर्वभावात्मा कृष्णः सापि च तादृशी ।
विशिष्टस्यैव सर्वेषां कृष्णस्य हृदयस्थितेः ॥
द्वयोर्मिलितयोर्वाच्यं मन्मथत्वमभेदतः ।
द्विपत्रत्वाद्द्रुसस्यालम्बने द्वैविध्यमुच्यते,

इति, अत्र राधाकृष्णयोः सर्वथा समानांशत्वमेकात्मत्वं च स्फुटमुक्तम् । अत्र मुख्यशक्तिस्तु श्रीराधैव तथैवोपक्रमात्, इति बोध्यम् ॥

पूज्यपादश्रीचैतन्यमहाप्रभूणाम्मप्येषैव सिद्धान्तः तदुक्तं तदीयसम्प्रदायविद्भिः गोविन्दभाष्यपीठके द्वितीयपादे, श्रीबलदेवविद्याभूषणचरणैः श्रीकृष्णेहीत्याद्युपक्रम्य"—पुरुषार्थ बोधिन्या मथर्वणोपनिषदि श्रूयते—

गोकुलाख्ये माथुरमण्डले वृन्दावनमध्ये कल्पतरोर्मूलेऽष्टदलकेशरे गोविन्दोऽपि श्यामः पीताम्बरो द्विभुजो मयूरपिच्छशिरो वेणुवेत्रहस्तो निर्गुणः सगुणो निराकारः साकारो निरीहः सचेष्टो विराजते, द्वेपार्श्वे चन्द्रावली राधिका च यस्या अंशे लक्ष्मी दुर्गादिका शक्तिः इति अग्रे च तस्याद्या प्रकृती राधिका नित्या निर्गुणा सर्वालंकारशोभिता प्रशन्नाऽशेषलावण्यसुन्दरी" इत्यादि । ऋक्परिशिष्टेच"राधया माधवो देवो माधवेन च राधिका विभ्राजतेजनेषु" इति । गौतमीये तंत्रे चैवं स्मर्यते—

सत्वंतत्वं परत्वं च तत्त्वत्रयमहं किल ।
त्रितत्वरूपिणी सापि राधिका मम वल्लभा ॥
प्रकृतेः पर एवाहं सापि मच्छक्तिरूपिणी ।
देवी कृष्णमयी प्रोक्ता राधिका परदेवता ।
सर्वलक्ष्मीमयी सर्वकान्तिः सम्मोहिनी परा 'इति'

इह कृष्णमयीत्यनेनेदमुक्तम् "पराऽस्य शक्तिर्विविधैव श्रूयते स्वाभाविकी ज्ञानबलक्रिया च" इत्यादि श्रुत्या "यातीतगोचरा वाचां मनसां च विशेषणा । ज्ञानिज्ञानापरिच्छेद्या वन्देतामीश्वरीं पराम्, इति स्मृत्या च या भगवदभिन्ना ह्लादिनीत्यादिना विशेषिता, सा परैव राधिकेश्वरीति" अग्रेच तदेवं महालक्ष्मीत्वादेव श्रीराधायाः पूर्णत्वं निर्बाधम् श्रीकृष्णप्रेयस्यः सर्वा-लक्ष्म्यः सा तु महालक्ष्मीति सुश्लिष्टम्" इत्यन्तेनोक्तम् ॥

ईश्वरी परामित्यस्य व्याख्यानेऽपि ईश्वरीम् ईश्वरस्य श्रीकृष्णस्य भूतां पट्टमहिषीमित्यर्थं इत्युक्तम् । श्रीगोस्वामिपाद-श्रीहितहरिवंशाचार्यैरपि—

प्रेम्णः सन्मधुरोज्वलस्य हृदयं शृङ्गारलीलाकला—
वैचित्री परमाद्भुता भगवतः पूज्यैव कापीशता
ईशानी च सती महाशिवतनुः शक्तिः स्वतन्त्रा परा
वृन्दाविपिननाथपट्टमहिषी राधैव सेव्या मम" इत्यादि—
ना राधासुधानिधौ प्रतिपादितम् ।
सुधर्म्मबोधिन्यामपि तदीयहार्दविद्भिरुक्तम्-

चित् समुद्र श्यामल वरण गौरसिंधु आनन्द ।
दोऊ मिलि रससिन्धु के सार युगल वरचन्द्र–
चैतन्य सर्वथा भोक्ता आनन्द सर्वथा भोग ॥ इति ॥

पुराणादावपि राधाकृष्णयोरेव पूर्णतमत्वं सर्वमूलरूपत्वं सर्वथा समानांशत्वमेकात्मकत्वादि चोक्तानि ।

तथाहि भागवते—"एतेचांशकलाः पुंसः कृष्णस्तु भगवान् स्वयम् इति, सात्वततंत्रेऽपि"–यतः कृष्णावतारेण भगभेदाः पृथक् पृथक्, दर्शिताः पूर्णरूपेण तस्मात्सम्पूर्ण उच्यते" सा० ३ प० २७ श्लो० ।

अतः कृष्णस्य देवस्य ब्रह्मणः पुरुषस्य च ।
वस्तुतो नैव भेदो हि वर्ण्यते तैरपि द्विज ।
यथाऽर्थो बहुधा भाति नानाकरणवृत्तिभिः ।
तथा स भगवान कृष्णो नानेव परिचक्षते ॥
अतः सर्वमतेनापि श्रीकृष्णः पुरुषोत्तमः ।
लीलामानुषरूपेण देवकीजठरंगतः ॥
अतः सर्वावतारांणां कारणं कृष्ण उच्यते ।
स एव सर्वलोकानामाराध्यः पुरुषोत्तमः ॥

सा० ३ प० ४८–५४ श्लोक

इत्यादिना श्रीशिवेन नारदं प्रति निरूपितम् ।
नारदीयमहापुराणेऽप्युत्तरखंडेऽष्टपंचाशतमाध्याये–
"देवि सर्वेऽवतारास्तु ब्रह्मणः कृष्णरूपिणः,
अवतारी स्वयं कृष्णः सगुणो निर्गुणः स्वयम् ॥

एवं नारदीये पूर्वखण्डे द्व्यधिकाशीतितमाध्याये नारदं प्रति सनत्कुमारेण राधाकृष्णविग्रहत एव लक्ष्मीनारायणयोरप्युत्पत्तिरुक्ता-

या तु राधा मया प्रोक्ता कृष्णार्धाङ्गसमुद्भवा ।
गोलोकवासिनी सा तु नित्या कृष्णसहायिनी ॥
तेजोमंडलमध्यस्था दृश्याऽदृश्यस्वरूपिणी ।
कदाचित्तु मया सार्धं स्थितस्य मुनिसत्तम ॥
कृष्णस्य वामभागात्तु जातो नारायणः स्वयम् ।
राधिकायाश्च वामांगान्महालक्ष्मी र्बभूव ह ॥ इति ॥
एवं तत्रैव, उत्तरखण्डे-पुरुषोत्तममाहात्म्यप्रसंगे वदतः-
"योऽसौ निरंजनो देवश्चित्स्वरूपी, इत्युपक्रम्य--
कदाचित्क्रीडतोर्द्वैवि राधामाधवयोर्वपुः ॥
द्विधाभूतमभूत्तत्र वामांगं तु चतुर्भुजम् ।
तद्वद्राधास्वरूपं च द्विधाभूतममूत्सति"
इत्यादिना द्विभुजराधाकृष्णतः चतुर्भुजलक्ष्मीनारायणादीनामुत्पत्तिमाह ।

ब्रह्मवैवर्ते प्रकृतिखण्डे द्वितीयाध्याये देवीभागवते च-
नवमस्कन्धे द्वितीयाध्याये"

अथ कालान्तरे सा च द्विधारूपा बभूवह ।
वामार्धांगाच्च कमला दक्षिणार्धा च राधिका
एतस्मिन्नन्तरे कृष्णो द्विधा रूपो बभूव ह ।
दक्षार्धश्च द्विभुजो वामार्धश्च चतुर्भुजः ॥ इति ॥
तत्रै प्रकृतिखण्डेऽष्टचत्वारिंशततमाध्यायेऽपि--
राधावामांशभागेन महालक्ष्मीर्बभूव ह ।

चतुर्भुजस्य सा पत्नी देवी वैकुण्ठवासिनी ॥
स्वयं राधा कृष्णपत्नी कृष्णवक्षस्स्थलस्थिता ।
प्राणाधिष्ठात्रीदेवी सा तस्यैव परमात्मनः ॥ इति च

नारदपंचरात्रेऽपि ज्ञानामृतसारसंहितायाम् , सर्वादि-सृष्टिप्रकरणे—

राधावामांशसंभूता महालक्ष्मीर्बभूव ह ।
ऐश्वर्याधिष्ठात्री देवीश्वरस्येति नारद
तदंशा सिन्धुकन्या च क्षीरोदमथनोद्भवा ॥ इति ॥

पाद्मे पातालखण्डे वृन्दावनमाहात्म्ये युगलमन्त्रव्याख्याने तयोरेव साक्षाल्लक्ष्मीनारायणत्वमुक्तम्—

वहिरंगैःप्रपंचस्य स्वांशैर्मायादिशक्तिभिः ।
अन्तरंगैस्तथा नित्यविभूतैस्तैश्चिदादिभिः ॥
गोपनादुच्यते गोपी राधिका परदेवता ।
सर्वलक्ष्मीस्वरूपा सा कृष्णाह्लादस्वरूपिणी ॥
अतः सा प्रोच्यते विप्र ह्लादिनी तु मनीषिभिः ।
सा तु साक्षान्महालक्ष्मी कृष्णो नारायणः स्वयम् ॥

वृहद्ब्रह्मसंहितायामपि द्वितीयेऽध्याये"--

प्रेमकल्पलताबीजं प्रेमपादपसत्फलम् ।
गौरं तु राधिकारूपं राध्यते पुरुषोऽनया ॥
यथा मधुरिमा नीरे स्पर्शनं मारुते यथा ।
गन्धः पृथिव्यामनघो राधिकेयं तथा हरौ ॥

वृ० ब्र० २ अ० २१ श्लो०

स्कान्देऽपि भागवतमाहात्म्ये, शाण्डिल्यः

आत्मा तु राधिका तस्य तयैव रमणादसौ ॥

आत्मारामतया विप्र प्रोच्यते गूढवेदिभिः ॥ इति

पुनस्तत्रैवाध्यायान्तरे कालिन्दी--

आत्मारामस्य कृष्णस्य ध्रुवमात्मास्ति राधिका ।

तस्या एवांशविस्तारा: सर्वाः श्रीकृष्णनायिकाः ।

स एव सा स सैवास्ति वं शीतत्प्रेमरूपिका ॥ इति

भागवतेऽपि द्वितीये—

नमो नमस्तेस्त्वृषभाय सात्वतां विदूरकाष्ठाय मुहुः कुयोगिनां, निरस्तसाम्यातिशयेन राधसा स्वधामनि ब्रह्मणि रंस्यते नमः" इति । राधःशब्दसूचिता निरस्तसाम्यातिशया श्रीराधैव नान्येत्यपिबोध्यम् ।

एवंभूतनिरस्तसमस्तसाम्यातिशयायाः सर्वशक्तिमय्याः परमलक्ष्मीरूपायाः कृष्णार्धांगरूपाया श्रीराधायाः श्रीकृष्णेन सह स्वरूपवदनादिसिद्धमेवदाम्पत्यम्" परोढा राधा तु सीतायावेदवतीव मुख्यराधायाः छायारूपा केदारकन्या वृन्दा नाम्नीअन्यैव तदुक्तं ब्रह्मवैवर्तेकृष्णजन्मखण्डे उत्तरार्धे षडशीतितमाध्याये केदारकन्याम्प्रति विष्णुना—

त्वयायुः तपसा प्राप्तं यावदायुश्च ब्रह्मणः ।

तदेवं देहिधर्माय गोलोकं गच्छ सुन्दरि ॥

तन्वाऽनया च तपसा पश्चान्मां च ल'
पश्चाद्गोलोकमागत्य वाराहे च वरानने ॥
वृषभानुसुता त्वं च राधाच्छाया भविष्यसि ।
मत्कलांशश्च रायाणः त्वां विवाहे ग्रहिष्यति ॥
मां लभिष्यसि रासे च गोपीभीराधया ॥
सा चैव वास्तवी राधा त्वं च छायास्वरूपिणी ॥
विवाहकाले रायाणः त्वां च छायां ग्रहिष्यति ।
त्वां दत्वा वास्तवी राधा सान्तर्धाना भविष्यति ॥
स्वप्ने राधापदांभोजं पश्यन्ति वल्लवाः ।
स्वयं राधाहरेः क्रो रायाणमन्दिरे" ॥ इत्यादिनेति ।

तदेवं वृषभानुगेहे मुख्यराधाच्छायाराधाभेदेन द्वे रा जनिते तत्र छायाराधाया रायणेन सह विवाहोऽभूत् मुख्य राधायास्तु भाण्डीरवने श्रीकृष्णेन सह ब्रह्मणा विवाहः कृतः स च स्पष्टं वर्णितः, तत्रैव पंचदशाध्याये, अतएव शिवपुराणे रुद्रसंहितायां मेनाचरितप्रसंगे च--

तस्य पत्नी समाख्याता राधेति जगदम्बिका ।
प्रकृतेः परमामूर्तिः पंचमी सुविहारिणी ॥
कलावती सुता राधा साक्षात् गोलोकवासिनी ।
गुप्तस्नेहनिबद्धा सा कृष्णपत्नी भविष्यति ॥ इत्यत्र—

तस्याः कृष्णपत्नीत्वमुक्तं--ज्ञानामृतसारसंहितोक्त

प|ष्टम्

नाम्न्यपि-ति भागव

नाम परिगणितम् "आन्तु...

वमवतारानवतारोभयदशायामपि तयोर्दाम्पत्यमेव"

स्फुटतया राधाचरितपरेष्वार्षनिबन्धेषु तथैव वर्णनात्, |वतादौ तु न तस्याः स्फुटतया चरितमस्तीति न विरोधः एष एव ।न्तः सर्वेष्वपि--।चीनवैष्णवसम्प्रदायेषु" तदेवं तत्र ।ढात्वरोपः प्रमादमूलकः एव ।

तदुक्तं ब्रह्मवैवर्ते जन्मखण्डे--

शापदात्रा श्रीदाम्नैव—"मूढां ।ाणपत्नीं त्वां वदयन्ति ।तीतले, इति । शापोऽपि, आसन्ना स्वार्थमेव श्रीकृष्णस्य स्यागादिप्रतीतिवत् इति संक्षेपः ॥ विस्तृतं विवेचितं मया युग्म-ासमीक्षायाम् । इति श्रीराधामुकुन्दार्पणमस्तु ।

झोपाह्वभगीरथशर्मा मैथिलः, न्यायवेदान्ताचार्य्यः ।

परमत्व

निष्कर्ष--

सन

उपर संस्कृत में जो कुछ लिखा है, उन सबका निष्कर्ष अ? कि--श्रीकृष्ण ही सब शास्त्रों का अन्तिम तत्व है। उनके मान तथा उनसे श्रेष्ठ कोई वस्तु नहीं है।

वे निरतिशय सच्चिदानन्दविग्रह तथा निरतिशय अनन्त ।गुणगुणाकर हैं। निरतिशयगुणशक्त्यादि उन में इस

...-वभव ...अवतार मत्स्या
दशयादि-पुरुषावतार चतुर्भजादि-विलास,
हैं। प्राकृत गुण धर्मादि उनमें नहीं है, अतएव वे
लाते हैं। निजस्वरूपातिरिक्त--सथा प्राकृत देहादि
निराकार भी कहलाते हैं, किन्तु निरतिशय
सच्चिदानन्द ही विग्रहाकार होने से सविग्रह
किशोर है।

ठीक उसी प्रकार श्रीवृषभानुनन्दिनी भी
है । वासुदेवादिव्यूह वैभव गुणावतार, लीलाव
वतार, विलासावतार के पत्नियों का अवतारिणी त
सच्चिदानन्दविग्रहा निरतिशयसर्वगुणसम्पन्ना अन
उन दोनों में अणुमात्र भी भेद नहीं है। एक ही
रसस्वभावतया स्वरूपमहिम्नैव अनादि से ही दम्
भासता है। भेद बुद्धि रखने वाला महापापी है। १
भी कहती है + "राधाकृष्णयोरेकमासनमेका, एका
मनः, एकं ज्ञानम्, एक आत्मा, एकं पदम्, एका कृति
राधाकृष्ण को एक ही आसन, एक ही बुद्धि, एक ?
ही आत्मा, एक ही स्थान, एक ही यत्न है, इत्यादि
का पति पत्नी भाव भी स्वरूप के जैसा ही अनादि सि

--श्रीभगीरथ झा मैथिल, न्या॰ वे॰

+[पुरु॰ बोधि॰ ८ प्रपाठक]